गुरु-पूर्णिमा-अङ्क

कौल-कल्पतरु

चण्डी

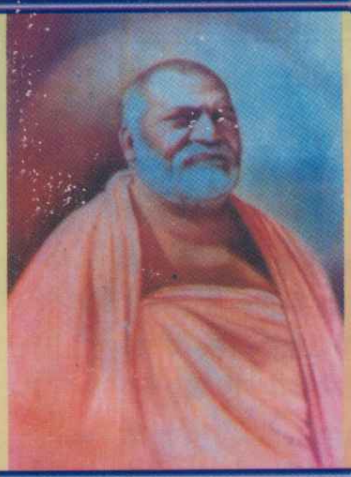

'गुरु' का अर्थ
स्थूल शरीर
नहीं है।

हिन्दू शास्त्रों में
'देह-पूजा' के लिए
स्थान नहीं है।

'स्थूल शरीर'
के माध्यम से
'सूक्ष्म' की तुष्टि
होती है।

'स्थूल शरीर'
में जो
'दिव्य ज्ञान-ज्योति'
है, वही आराध्य है।

श्रीविश्वसार-तन्त्रोक्त

श्रीसद्-गुरु-स्तोत्रम्

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुरेव परं ब्रह्म, तस्मै श्रीगुरवे नमः॥१॥

अखण्ड-मण्डलाकारं, व्याप्तं येन चराचरं।
तत्-पदं दर्शितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः॥२॥

अज्ञान-तिमिरान्धस्य, ज्ञानाञ्जन-शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः॥३॥

स्थावरं जङ्गमं व्याप्तं, येन कृत्स्नं चराचरं। तत्-पदं दर्शितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः॥४॥
चिद्-रूपेण परि-व्याप्तं, त्रैलोक्यं स-चराचरं। तत्-पदं दर्शितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः॥५॥
सर्व-श्रुति-शिरो-रत्न-समुद्भासित-मूर्तये। वेदान्ताम्बुज-सूर्याय, तस्मै श्रीगुरवे नमः॥६॥
चैतन्यः शाश्वतः शान्तो, व्योमातीतो निरञ्जनः। विन्दु-नाद-कलातीतस्तस्मै श्रीगुरवे नमः॥७॥
ज्ञान-शक्ति-समारूढस्तत्त्व-माला-विभूषितः। भुक्ति-मुक्ति-प्रदाता च, तस्मै श्रीगुरवे नमः॥८॥
अनेक-जन्म सम्प्राप्त-कर्मेन्धन-विदाहिने। आत्म-ज्ञानाग्नि-दानेन, तस्मै श्रीगुरवे नमः॥९॥
शोषणं भव-सिन्धोश्च, प्रापणं सार-सम्पदः। यस्य पादोदकं सम्यक्, तस्मै श्रीगुरवे नमः॥१०॥
न गुरोरधिकं तत्त्वं, न गुरोरधिकं तपः। तत्त्व-ज्ञानात् परं नास्ति, तस्मै श्रीगुरवे नमः॥११॥
मन्नाथः श्रीजगन्नाथो, मद्-गुरुः श्रीजगद्गुरुः। मदात्मा सर्व-भूतात्मा, तस्मै श्रीगुरवे नमः॥१२॥
गुरुरादिरनादिश्च, गुरुः परम-दैवतं। गुरोः पर-तरं नास्ति, तस्मै श्रीगुरवे नमः॥१३॥

ब्रह्मानन्दं परम-सुखदं केवलं ज्ञान-मूर्तिम्।
द्वन्द्वातीतं गगन-सदृशं तत्त्वमस्यादि-लक्ष्यम्॥

एकं नित्यं विमलमचलं सर्व-धी-साक्षी-भूतम्।
भावातीतं त्रिगुण-रहितं सद्-गुरुं तं नमामि॥१४॥

॥ श्रीविश्वसार-तन्त्रे श्री सद्-गुरु-स्तोत्रम्॥

सूचना

'चण्डी' का ६३वाँ वर्ष (अप्रैल, २००४ से मार्च, २००५)

- 'चण्डी' के ६३वें वर्ष में **६ सामान्य अङ्क + ६ विशिष्ट अङ्क**—कुल १२ अङ्क प्रकाशित होंगे।
- **'चण्डी' वर्ष ६३ के सामान्य अङ्क + विशिष्ट अङ्क** सभी पाठकों की सेवा में **४०.०० रु० की वी०पी०** द्वारा भेजे जाएँगे। इस प्रकार कुल **छः वी०पी०** भेजी जाएँगी।
- जो बन्धु **वी०पी०** द्वारा अङ्क मँगाना न चाहते हों, वे पत्र द्वारा हमें इसकी सूचना देकर **रजिस्ट्री** द्वारा मँगा सकते हैं।
- जो बन्धु **विशिष्ट अङ्क** मँगाना न चाहते हों, वे **६ सामान्य अङ्क** साधारण डाक से १००.०० रु० अनुदान भेजकर मँगा सकते हैं।

- मानद सम्पादक
  रमादत्त शुक्ल
- सम्पादक
  ऋतशील शर्मा
- अनुदान
  सामान्य अङ्क : अनुदान रु० १५/-
  विशिष्ट अङ्क : अनुदान रु० २५/-
- पता
  श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग - २११००६

विशेष

- **'चण्डी' वर्ष ६३, अङ्क ५-६** (अगस्त-सितम्बर, २००४) + **विशिष्ट अङ्क** (दश-महा-विद्या-मन्त्र-साधना) सभी पाठकों की सेवा में **१० सितम्बर, २००४** को भेजे जाएँगे।
- **'मन्त्रात्मक सप्तशती'** का अन्तिम **भाग ५**, शीघ्र ही भेजा जाएगा।

'कौल-कल्पतरु' चण्डी

ज्येष्ठ-आषाढ़, २०६१ वि० (जून-जुलाई, २००४)

इस अङ्क में

(१) श्रीसद्-गुरु-स्तोत्रम् (आवरण-पृष्ठ २)
(२) 'चण्डी' की विशिष्ट प्रस्तुतियाँ २६
(३) श्रीकृष्ण-त्रैलोक्य-विजय-कवचम् २७
(४) हिन्दी-श्रीकृष्ण-त्रैलोक्य-विजय-कवच २८
(५) श्रीराधा-जगन्मङ्गल-कवच २९
(६) हिन्दी श्रीराधा-जगन्मङ्गल-कवच ३०
(७) 'श्रीगुरु-मण्डल-महा-मन्त्र'-साधना ३१

[१'श्रीनाथादि-गुरु'-पूजन-तर्पण, २'गुरु'-त्रय-पूजन-तर्पण, ३'गणपति'- पूजन-तर्पण, ४'पीठ'-त्रय-पूजन-तर्पण, ५ 'भैरव'-पूजन-तर्पण, ६ 'सिद्धौघ'-पूजन-तर्पण, ७'वटुक-त्रय'-पूजन-तर्पण, ८'पद-युग'-पूजन-तर्पण, ९ 'दूती-क्रम'-पूजन-तर्पण, १०'मण्डल'-पूजन-तर्पण, ११'वीरानष्ट'-पूजन-तर्पण, १२'चतुष्क-षष्टि'-पूजन-तर्पण, १३'नव-मुद्रा'-पूजन-तर्पण, १४'वीरावली'-पञ्चक-पूजन-तर्पण, १५ 'श्रीमन्मालिनि'-मन्त्र-राज-जप]

(८) श्रीगुरु-तन्त्रम् ३९
(९) हिन्दी गुरु-तन्त्र ४६
(१०) साधन-माला ५३-६४

(गताङ्क क्रम ११ से आगे)

१२ श्रीकार्तवीर्यार्जुन-मन्त्र-प्रयोग ५३
१३ नेत्र-रोग-नाशक 'बत्तीसा-यन्त्र' ५७
१४ सर्वारिष्ट-निवारण स्तोत्र ५८
१५ त्रैलोक्य-विजय श्रीनृसिंह-कवचम् ६०
१६ मनोवांछित वर-प्राप्ति-प्रयोग ६२
१७ 'बन्दी-मोचन-मन्त्र'-प्रयोग ६३
१८ रोग एवं अपमृत्यु-निवारक प्रयोग ६४

'चण्डी' की विशिष्ट प्रस्तुतियाँ

श्री ऋतशील शर्मा, श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-६

'चण्डी' के प्रस्तुत अङ्क में (१) **श्रीसद्-गुरु-स्तोत्र**, (२) **श्रीगुरु-मण्डल-महा-मन्त्र-साधना** और (३) **श्रीगुरु-तन्त्र**—तीन विशिष्ट प्रस्तुतियाँ हैं। इन तीनों का आज विशेष महत्त्व है।

'श्रीसद्-गुरु-स्तोत्र' द्वारा **ब्रह्मानन्द के साक्षात् स्वरूप, परम सुख को प्रदान करनेवाले, साक्षात् ज्ञान-स्वरूप, लाभ-हानि से परे, आत्म-ज्ञान एवं तत्त्व-बोध से शोभायमान, परमा शक्ति को दिखानेवाले—'श्रीसद्-गुरु'** से सम्बन्ध स्थापित होता है, जो आज के समय में अधिकांश लोगों के लिए अत्यन्त दुर्लभ हैं क्योंकि दूर-दूर तक उनके पास **'श्रीसद्-गुरु'** के रूप में **महान् आत्मा की उपलब्धि** नहीं है। ऐसे में प्रस्तुत सुन्दर स्तोत्र के द्वारा सूक्ष्म भावनाओं के माध्यम से, सर्वत्र सदा उपस्थित **'अव्यक्त सद्-गुरुओं' की कृपा** भी पाई जा सकती है और **मार्ग-दर्शन** भी।

इसी प्रकार **'श्रीगुरु-मण्डल-महा-मन्त्र'-साधना** भी अत्यन्त उपयोगी है। इसके द्वारा विशद रूप में न केवल **'श्रीगुरु-तत्त्व'** की जानकारी होती है, अपितु **'श्रीगुरु-तत्त्व'** की अपने में जाग्रति भी होती है। इसीलिए इसे **'महा-मन्त्र'** कहा गया है।

'चण्डी' की तीसरी प्रस्तुति—**'श्रीगुरु-तन्त्र'** की माँग इधर बहुत दिनों से रही है। पिछले दो वर्षों से यह अप्राप्त था। आज यह पुनः **'चण्डी'**-पत्रिका के द्वारा सुलभ हो रहा है। **जगद्-गुरु देवाधिदेव भगवान् शङ्कर** एवं **भगवती पार्वती** के संवाद के रूप में इसमें जहाँ **'श्रीगुरु-ध्यान', 'कुल-गुरुओं का ध्यान', 'श्रीगुरु-पूजा'**-सम्बन्धी महत्त्व-पूर्ण चर्चाएँ प्रस्तुत हुई हैं; वहीं इसमें—**'श्रीगुरु-सेवा'** के सम्बन्ध में जो विस्तार से वर्णन है, उसके सम्बन्ध में **'चण्डी'** के पाठकों को विशेष रूप से सजग होने की आवश्यकता भी है।

'श्रीगुरु-तन्त्र' में **'कौल-गुरु'** का वर्णन है। **'कौल-गुरु'** वे होते हैं, जिनका समस्त क्रिया-कलाप **'दिव्य'** होता है। उनका उठना-बैठना, चलना-फिरना, खाना-पीना—सभी कुछ **'दिव्य'** होता है। लाभ-हानि, अच्छा-बुरा, घृणा-द्वेष आदि से वे सर्वथा मुक्त होते हैं। ऐसे लोगों के पास मात्र रहने से, उनके नित्य के कार्यों में सहयोग देने मात्र से **'ईश्वर की कृपा-प्राप्ति का सुयोग'** बन जाता है।

'कौल-गुरु' की प्राप्ति—आज अत्यन्त दुर्लभ है। आज तो **स्वेच्छाचारिता की बाढ़ में बह रहे 'गुरुओं'** का ही बोल-बाला है! जहाँ देखिए—**आनन-फानन में हजारों की संख्या में 'शिष्य' बनाने का उपक्रम करनेवाले, वास्तविक ज्ञान की अपेक्षा किस्से-कहानी कहनेवाले, शास्त्र-विवेचन के स्थान पर कथाएँ कहनेवाले** ही दिख रहे हैं। ऐसे लोगों के सम्बन्ध में **'श्रीगुरु-तन्त्र'** की बातें कदापि लागू नहीं होतीं। ऐसे लोगों से **'अच्छी बातें'** ग्रहण करने में कोई आपत्ति नहीं, किन्तु उनमें जो आज की **स्वेच्छाचारिता/ प्रतिद्वन्द्विता/ प्रदर्शन की गन्दगी** है, उससे दूर ही रहना चाहिए। इसी में **सामान्य श्रद्धालु-जनों की भलाई** है और यह सामान्य श्रद्धालुओं के लिए तभी सम्भव है, जब वे बराबर **सजग** बने रहें।

सजग बनने के लिए ही इस सन्दर्भ में **'राष्ट्र-गुरु' स्वामी जी महाराज** की **चार सूक्तियाँ** प्रस्तुत अङ्क के प्रथम आवरण-पृष्ठ पर प्रस्तुत हैं। आशा है, सभी **सजग पाठक** उन पर विशेष ध्यान देंगे।

***

'जन्माष्टमी' के पावन अवसर पर :

श्रीकृष्ण-त्रैलोक्य-विजय-कवचम्

विनियोग—ॐ अस्य त्रैलोक्य-विजय-कवचस्य श्रीप्रजापतिः ऋषिः, गायत्री छन्दः, रासेश्वर-श्रीकृष्णः देवता, त्रैलोक्य-विजय-प्राप्तौ पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—शिरसि श्रीप्रजापति-ऋषये नमः। मुखे गायत्री-छन्दसे नमः। हृदि रासेश्वर-श्रीकृष्ण-देवतायै नमः। सर्वाङ्गे त्रैलोक्य-विजय-प्राप्तौ पाठे विनियोगाय नमः।

॥ मूल कवच-पाठ : श्रीमहादेव उवाच ॥

प्रणवो मे शिरः पातु, श्रीकृष्णाय नमः सदा। पायात् कपालं कृष्णाय, स्वाहा पञ्चाक्षरः स्मृतः॥१
कृष्णेति पातु नेत्रे च, कृष्ण स्वाहेति तारकम्। हरये नमः इत्येवं, भ्रू-लतां पातु मे सदा॥२
ॐ गोविन्दाय स्वाहेति, नासिकां पातु सन्ततम्। गोपालाय नमो गण्डौ, पातु मे सर्वतः सदा॥३
ॐ नमो गोपाङ्गनेशाय, कर्णौ पातु सदा मम। ॐ कृष्णाय नमः शश्वत्, पातु मेऽधर-युग्मकम्॥४
ॐ गोविन्दाय स्वाहेति, दन्तौघं मे सदाऽवतु। पातु कृष्णाय दन्ताधो, दन्तोर्ध्वं क्लीं सदाऽवतु॥५
ॐ श्रीकृष्णाय स्वाहेति, जिह्विकां पातु मे सदा। रासेश्वराय स्वाहेति, तालुकं पातु मे सदा॥६
राधिकेशाय स्वाहेति, कण्ठं पातु सदा मम। नमो गोपाङ्गनेशाय, वक्षः पातु सदा मम॥७
ॐ गोपेशाय स्वाहेति, स्कन्धं पातु सदा मम। नमः किशोर-वेषाय, स्वाहा पृष्ठं सदाऽवतु॥८
उदरं पातु मे नित्यं, मुकुन्दाय नमः सदा। ॐ क्लीं कृष्णाय स्वाहेति, करौ पातु सदा मम॥९
ॐ विष्णवे नमो बाहु-युग्मं पातु सदा मम। ॐ ह्रीं भगवते स्वाहा, नखरं पातु मे सदा॥१०
ॐ नमो नारायणायेति, नख-रन्ध्रं सदाऽवतु। ॐ श्रीं क्लीं पद्म-नाभाय, नाभिं पातु सदा मम॥११
ॐ सर्वेशाय स्वाहेति, कङ्कालं पातु मे सदा। ॐ गोपी-रमणाय स्वाहा, नितम्बं पातु मे सदा॥१२
ॐ गोपीनां प्राण-नाथाय, पादौ पातु सदा मम॥१३
ॐ केशवाय स्वाहेति, मम केशान् सदाऽवतु। नमः कृष्णाय स्वाहेति, ब्रह्म-रन्ध्रं सदाऽवतु॥१४
ॐ माधवाय स्वाहेति, मे लोमानि सदाऽवतु। ॐ ह्रीं श्रीं रसिकेशाय, स्वाहा सर्वं सदाऽवतु॥१५
परिपूर्ण-तमः कृष्णः, प्राच्यां मां सर्वदाऽवतु। स्वयं गो-लोक-नाथो मामाग्नेय्यां दिशि रक्षतु॥१६
पूर्ण-ब्रह्म-स्वरूपश्च, दक्षिणे मां सदाऽवतु। नैर्ऋत्यां पातु मां कृष्णः, पश्चिमे पातु मां हरिः॥१७
गोविन्दः पातु मां शश्वद्वायव्यां दिशि नित्यशः। उत्तरे मां सदा पातु, रसिकानां शिरोमणिः॥१८
ऐशान्यां मां सदा पातु, वृन्दावन-विहार-कृत्। वृन्दावनी-प्राण-नाथः, पातु मामूर्ध्व-देशतः॥१९
सदैव माधवः पातु, बलिहारी महा-बलः। जले स्थले चान्तरिक्षे, नृसिंहः पातु मां सदा॥२०
स्वप्ने जागरणे शश्वत्, पातु मां माधवः सदा। सर्वान्तरात्मा निर्लिप्तः, पातु मां सर्वदा विभुः॥२१

॥ फल-श्रुति ॥

इति ते कथितं वत्स! सर्व-मन्त्रौघ-विग्रहम्। त्रैलोक्य-विजयं नाम, कवचं परमाद्भुतम्॥१
यदि स्यात् सिद्ध-कवचो, जीवन्मुक्तो भवेत् तु सः। निश्चितं कोटि-वर्षाणां, पूजायाः फलमाप्नुयात्॥२

स भवेत् सिद्ध-कवचो, दश-लक्षं जपेत् तु यः। यो भवेत् सिद्ध-कवचः, सर्वज्ञः स भवेद् ध्रुवम्॥३

॥ इति श्रीब्रह्म-वैवर्त-महा-पुराणोक्त श्रीकृष्ण-विजय-कवचम् ॥

***

हिन्दी श्रीकृष्ण-त्रैलोक्य-विजय-कवच

॥ हिन्दी कवच-पाठ—श्रीमहादेव बोले ॥

'**ॐ श्रीकृष्णाय नमः**'—सदा मेरे शिर की रक्षा करे। पञ्चाक्षर '**कृष्णाय स्वाहा**'—कपाल की रक्षा करे॥१॥ '**कृष्ण**'—दोनों नेत्रों की रक्षा करे, '**कृष्ण स्वाहा**'—पुतलियों की रक्षा करे। '**हरये नमः**'—सदा मेरी भौंह की रक्षा करे॥२॥ '**ॐ गोविन्दाय स्वाहा**'—निरन्तर नासिका की रक्षा करे। '**गोपालाय नमः**'—सदा दोनों कपोलों की रक्षा करे॥३॥ '**ॐ नमो गोपाङ्गनेशाय**'—मेरे कानों की सदा रक्षा करे और '**ॐ कृष्णाय नमः**'—दोनों होठों की रक्षा करे॥४॥ '**ॐ गोविन्दाय स्वाहा**'—मेरी दन्त-पंक्तियों की रक्षा करे। '**कृष्णाय स्वाहा**'—दाँतों के निचले भाग और '**क्लीं**'—दाँतों के ऊपरी भाग की रक्षा करे॥५॥ '**ॐ श्रीकृष्णाय स्वाहा**'—सदा मेरी जिह्वा की रक्षा करे। '**रासेश्वराय स्वाहा**'—सदा मेरे तालु की रक्षा करे॥६॥ '**राधिकेशाय स्वाहा**'—सदा मेरे कण्ठ की रक्षा करे। '**नमो गोपाङ्गनेशाय**'—मेरे वक्ष-स्थल की रक्षा करे॥७॥ '**ॐ गोपेशाय स्वाहा**'—सदा मेरे कन्धे की रक्षा करे। '**नमः किशोर-वेषाय स्वाहा**'—मेरे पृष्ठ की रक्षा करे॥८॥ '**मुकुन्दाय नमः**'—मेरे उदर की नित्य रक्षा करे। '**ॐ क्लीं कृष्णाय स्वाहा**'—सदा मेरे हाथों की रक्षा करे॥९॥ '**ॐ विष्णवे नमः**'—मेरी बाहुओं की रक्षा करे। '**ॐ ह्रीं भगवते स्वाहा**'—सदा मेरे नखों की रक्षा करे॥१०॥ '**ॐ नमो नारायणाय**'—सदा नख-छिद्रों की रक्षा करे। '**ॐ श्रीं क्लीं पद्म-नाभाय**'—सदा मेरी नाभि की रक्षा करे॥११॥ '**ॐ सर्वेशाय स्वाहा**'—सदा मेरे कङ्काल की रक्षा करे। '**ॐ गोपी-रमणाय स्वाहा**'—सदा मेरे नितम्ब की रक्षा करे॥१२॥ '**ॐ गोपीनां प्राण-नाथाय**'—सदा मेरे चरण की रक्षा करे॥१३॥ '**ॐ केशवाय स्वाहा**'—सदा मेरे केशों की रक्षा करे। '**नमः कृष्णाय स्वाहा**'—सदा ब्रह्म-रन्ध्र की रक्षा करे॥१४॥ '**ॐ माधवाय स्वाहा**'—सदा मेरे लोमों की रक्षा करे। '**ॐ ह्रीं श्रीं रसिकेशाय स्वाहा**'—सदा सबकी रक्षा करे॥१५॥

'**पूरिपूर्ण-तम कृष्ण**'—सर्वदा पूर्व-दिशा में मेरी रक्षा करें। '**स्वयं गो-लोक-नाथ**'—अग्नि-कोण में मेरी रक्षा करें॥१६॥ '**पूर्ण-ब्रह्म-स्वरूप**'—सदा दक्षिण में मेरी रक्षा करें। नैर्ऋत्य में '**कृष्णः**' मेरी रक्षा करे, पश्चिम में '**हरिः**' मेरी रक्षा करे॥१७॥ '**गोविन्दः**'—वायव्य-कोण में मेरी निरन्तर रक्षा करे, '**रसिकों के शिरो-मणि**'—सदा उत्तर में मेरी रक्षा करें॥१८॥ '**वृन्दावन-बिहारी**'—सदा ऐशान-कोण में मेरी रक्षा करें। '**वृन्दावनी-प्राणनाथ**'—सदा ऊर्ध्व-देश में मेरी रक्षा करें॥१९॥ '**बलिहारी**'-**माधव**, '**महा-बल-माधव**'—मेरी सदैव रक्षा करें। जल, स्थल एवं आकाश में—'**नृसिंह**' मेरी रक्षा करें॥२०॥ सदा सोते-जागते '**माधव**' मेरी निरन्तर रक्षा करें। '**निर्लिप्त सर्वान्तरात्मा विभु**' चारों ओर से मेरी रक्षा करें॥२१॥

॥ हिन्दी फल-श्रुति ॥

हे वत्स! इस प्रकार मैंने '**त्रैलोक्य-विजय**'-नामक कवच, जो समस्त मन्त्र-समुदाय का

शरीर और परम अदभुत है, तुम्हें बता दिया।।१।। यदि यह '**कवच**' किसी को सिद्ध हो जाता है, तो वह '**जीवन्मुक्त**' होता है। **करोड़ों वर्षों की पूजा का फल** उसे निश्चित प्राप्त होता है। जो इसका **दस लाख** '**जप**' करता है, वह '**सिद्ध-कवच**' एवं '**सर्वज्ञ**' होता है।।३।।

।। श्रीब्रह्म-वैवर्त-महा-पुराणोक्त श्रीकृष्ण-विजय-कवच ।।

***

श्रीराधा-अष्टमी के पावन अवसर पर :

श्रीराधा-जगन्मङ्गल-कवच

विनियोग—ॐ अस्य श्रीराधा-जगन्मङ्गल-कवचस्य श्रीप्रजापति ऋषिः। गायत्री छन्दः। रासेश्वरी-श्रीराधा देवता। मम श्रीकृष्ण-भक्ति-सम्प्राप्तौ पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीप्रजापति-ऋषये नमः शिरसि। गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। रासेश्वरी-श्रीराधा-देवतायै नमः हृदि। मम श्रीकृष्ण-भक्ति-सम्प्राप्तौ पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

।। मूल-कवच-पाठ — श्रीमहेश्वर उवाच ।।

ॐ राधेति चतुर्थ्यन्तं, वह्नि-जायान्तमेव च। कृष्णेनोपासितो मन्त्रः, कल्प-वृक्षः शिरोऽवतु।।१
ॐ ह्रीं श्रीं राधिकां ङेऽन्तं, वह्नि-जायान्तमेव च। कपालं नेत्र-युग्मं च, श्रोत्र-युग्मं सदाऽवतु।।२
अं ऐं ह्रीं श्रीं राधिकायै, वह्नि-जायान्तमेव च। मस्तकं केश-सङ्घांश्च, मन्त्र-राजः सदाऽवतु।।३
ॐ रां राधां चतुर्थ्यन्तं, वह्नि-जायान्तमेव च। सर्व-सिद्धि-प्रदः पातु, कपोलं नासिकां मुखम्।।४
क्लीं ह्रीं कृष्ण-प्रियां ङेऽन्तं, कण्ठं पातु नमोऽन्तकम्।।५
ॐ रां रासेश्वरीं ङेऽन्तं, स्कन्धं पातु नमोऽन्तकम्। ॐ रां रास-विलासिन्यै, स्वाहा पृष्ठं सदाऽवतु।।६
वृन्दावन-विलासिन्यै, स्वाहा वक्षः सदाऽवतु। तुलसी-वन-वासिन्यै, स्वाहा पातु नितम्बकम्।।७
कृष्ण-प्राणाधिका ङेऽन्तं, स्वाहान्तं प्रणवादिकम्। पाद-युग्मं च सर्वाङ्गं, सन्ततं पातु सर्वतः।।८
प्राच्यां रक्षतु सा राधा, वह्नौ कृष्ण-प्रियाऽवतु। दक्षे रासेश्वरी पातु, गोपीशा नैर्ऋतेऽवतु।।९
पश्चिमे निर्गुणा पातु, वायव्ये कृष्ण-पूजिता। उत्तरे सन्ततं पातु, मूल-प्रकृतिरीश्वरी।।१०
सर्वेश्वरी सदैशान्यां, पातु मां सर्व-पूजिता। जले स्थले चान्तरिक्षे, स्वप्ने जागरणे तथा।।११
महा-विष्णोश्च जननी, सर्वतः पातु सन्ततम्।।१२

।। फल-श्रुति ।।

कवचं कथितं दुर्गे! श्रीजगन्मङ्गलं परम्। यस्मै कस्मै न दातव्यं, गुह्याद् गुह्यतरं परम्।।१
गुरुमभ्यर्च्य विधिवत्, वस्त्रालङ्कार-चन्दनैः। कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ, धृत्वा विष्णु-समो भवेत्।।२
शत-लक्ष-जपेनैव, सिद्धं च कवचं भवेत्। यदि स्यात् सिद्ध-कवचो, न दग्धो वह्निना भवेत्।।३
एतस्मात् कवचाद् दुर्गे! राजा दुर्योधनः पुरा। विशारदो जल-स्तम्भे, वह्नि-स्तम्भे च निश्चितम्।।४

मया सनत्कुमाराय, पुरा दत्तं च पुष्करे। सूर्य-पर्वणि मेरौ च, स सान्दीपनये ददौ॥५
बलाय तेन दत्तं च, ददौ दुर्योधनाय सः। कवचस्य प्रसादेन, जीवन्मुक्तो भवेन्नरः॥६
राज-द्वारे श्मशाने च, सिंह-व्याघ्रान्विते वने। दावाग्नौ सङ्कटे चैव, दस्यु-चौरान्विते भये॥७
कारागारे विपद्-ग्रस्ते, घोरे च दृढ-बन्धने। व्याधि-युक्तो भवेन् मुक्तो, धारणात् कवचस्य च॥८

❋❋❋

हिन्दी श्रीराधा-जगन्मङ्गल-कवच

'**ॐ राधायै स्वाहा**'—भगवान् कृष्ण द्वारा उपासित कल्प-वृक्ष-तुल्य मन्त्र शिर की रक्षा करे॥१॥ '**ॐ ह्रीं श्रीं राधिकायै स्वाहा**'—कपाल, दोनों नेत्रों तथा दोनों कानों की सदा रक्षा करे॥२॥ '**ॐ ऐं ह्रीं श्रीं राधिकायै स्वाहा**'—मन्त्र-राज मस्तक और केश-समूह की सदा रक्षा करे॥३॥ '**ॐ रां राधायै स्वाहा**'—सर्व-सिद्धि-प्रदायक कपोल, नासिका, मुख की रक्षा करे॥४॥ '**क्लीं ह्रीं कृष्ण-प्रियायै नमः**'—कण्ठ की रक्षा करे॥५॥ '**ॐ रां रासेश्वर्यै नमः**'—स्कन्ध की रक्षा करे। '**ओ रां रास-विलासिन्यै स्वाहा**'—सदा पीठ की रक्षा करे॥६॥ '**वृन्दावन-विलासिन्यै स्वाहा**'—सदा वक्षः-स्थल की रक्षा करे। '**तुलसी-वन-वासिन्यै स्वाहा**'—नितम्ब की रक्षा करे॥७॥ '**ॐ कृष्ण-प्राणाधिकायै स्वाहा**'—चरण-द्वय एवं चारों ओर से सर्वाङ्ग की सतत रक्षा करे॥८॥ पूर्व की ओर से '**राधा**' रक्षा करें, अग्नि-कोण की ओर '**कृष्ण-प्रिया**' रक्षा करें। दक्षिण की ओर '**रासेश्वरी**' रक्षा करें, नैर्ऋत्य-कोण में '**गोपीशा**' रक्षा करें॥९॥ पश्चिम दिशा में '**निर्गुणा**' रक्षा करे, वायव्य-कोण में '**कृष्ण-पूजिता**' एवं उत्तर की ओर '**मूल-प्रकृति-ईश्वरी**' निरन्तर रक्षा करे॥१०॥ ईशान-कोण में सदा '**सर्वेश्वरी**' मेरी रक्षा करें, जल-स्थल-अन्तरिक्ष-स्वप्न-जाग्रत् में '**सर्व-पूजिता**'॥११॥ '**महा-विष्णु-जननी**'—चारों ओर से निरन्तर रक्षा करे॥१२॥

॥ हिन्दी फल-श्रुति ॥

हे दुर्गे! **श्रीजगन्मङ्गल-नाम परम कवच** तुम्हें बताया है। इसे जिस किसी को नहीं देना चाहिए क्योंकि यह **गुप्त से भी परम गुप्ततर** है॥१॥ **वस्त्र, अलङ्कार, चन्दन** द्वारा **गुरु की सविधि अर्चा** करने के बाद '**कण्ठ**' में अथवा **दाहिने बाहु** में इस '**कवच**' को धारण करने से, वह **विष्णु** के समान हो जाता है॥२॥ '**सौ लाख जप**' करने से यह '**कवच**' सिद्ध हो जाता है, यदि '**कवच**' सिद्ध हो गया, तो वह अग्नि से जल नहीं सकता॥३॥ **हे दुर्गे!** पूर्व-काल में **राजा दुर्योधन** ने इसी '**कवच**' द्वारा **जल और अग्नि का स्तम्भन** किया था॥४॥ पहले मैंने '**पुष्कर**'-**क्षेत्र** में इसे **सनत्कुमार** को दिया था। '**मेरु-पर्वत**' पर **सान्दीपनि** को '**सूर्य**'-**ग्रहण** के समय उन्होंने दिया॥५॥ **सान्दीपनि** ने **बलराम** को तथा **बलराम** ने उसे **दुर्योधन** को दिया था। इस '**कवच**' के प्रसाद से मनुष्य **जीवन्मुक्त** हो जाता है॥६॥ **राज-द्वार, श्मशान, सिंह-बाघ से युक्त वन, दावाग्नि, सङ्कट, चोर-डाकुओं के भय, कारागार, घोर विपत्ति, दृढ़-बन्धन (सजा)** और **रोगी** होने पर, इस '**कवच**' के धारण करने से शीघ्र मुक्त हो जाता है॥८॥

❋❋❋

'गुप्तावतार बाबा-श्री' एवं पं० योगीन्द्रकृष्ण दौर्गादत्ति जी शास्त्री की कृपा से प्राप्त :

'श्रीगुरु-मण्डल-महा-मन्त्र'-साधना

श्रीगुरु-मण्डल-महा-मन्त्र-

श्रीनाथादि[१] गुरु-त्रयं[२] गण-पतिं[३] पीठ-त्रयं[४] भैरवम्[५],
सिद्धौघं[६] वटुक-त्रयं[७] पद-युगं[८] दूती-क्रमं[९] मण्डलम्[१०]।
वीरानष्ट[११] चतुष्क-षष्टि[१२] नवकं[१३] वीरावली-पञ्चकम्[१४],
श्रीमन्मालिनि-मन्त्र-राज[१५]-सहितं वन्दे गुरोर्मण्डलम्॥

विनियोग-

ॐ अस्य श्रीगुरु-मण्डल-महा-मन्त्रस्य हंस ऋषिः। श्रीगायत्री छन्दः। श्रीगुरु-मण्डलः देवता। ऐं वीजं। ह्रीं शक्तिः। क्लीं कीलकं। श्रीगुरु-मण्डल-प्रसाद-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास-

श्रीगुरु-मण्डल-महा-मन्त्रस्य हंस-ऋषये नमः शिरसि। श्रीगायत्री-छन्दसे नमः मुखे। श्रीगुरु-मण्डल-देवताभ्यो नमः हृदि। ऐं-वीजाय नमः गुह्ये। ह्रीं-शक्तये नमः पादयोः। क्लीं-कीलकाय नमः सर्वाङ्गे। श्रीगुरु-मण्डल-प्रसाद-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

१. 'श्रीनाथादि-गुरु'-पूजन-तर्पण ('ओघ'-त्रय-पूजन-तर्पण)[१]

(क) 'दिव्यौघ-गुरु'-पूजन-तर्पण-

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीशिवानन्दनाथ परा-शक्त्यम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीसदा-शिवानन्दनाथ चिच्छक्त्यम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीईश्वरानन्दनाथ आनन्द-शक्त्यम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीरुद्र-देवानन्दनाथ इच्छा-शक्त्यम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीविष्णु-देवानन्दनाथ ज्ञान-शक्त्यम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीब्रह्म-देवानन्दनाथ क्रिया-शक्त्यम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥६

(ख) 'सिद्धौघ-गुरु'-पूजन-तर्पण-

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीसनकानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीसनन्दनानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीसनातनानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीसनत्कुमारानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीशौनकानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीसनत्सुजातानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥६
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीदत्तात्रेयानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥७
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीरैवतानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥८
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीवामदेवानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥९
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीव्यासानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१०
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीशुकानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥११

(ग) 'मानवौघ-गुरु'-पूजन-तर्पण-

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीनृसिंहानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीमहेशानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीभास्करानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीमहेन्द्रानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीमाधवानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीविष्णुदेवानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥६

२. 'गुरु'-त्रय-पूजन-तर्पण (१ गुरु, २ परम-गुरु, ३ परमेष्ठि-गुरु)

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः शिवः सोऽहं-स्वरूप-निरूपण-हेतवे स्व-गुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सोऽहं हंसः शिवः सोऽहं-स्वच्छ-प्रकाश-विमर्श-हेतवे परम-गुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॐ हंसः शिवः सोऽहं हंसः स्वात्माराम-परमानन्द-पञ्जर-विलीन-तेजसे परमेष्ठि-गुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३

३. गणपति (महा-गणपति)-पूजन-तर्पण

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वर वरद सर्व-जनं मे वशमानय स्वाहा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

४. 'पीठ'-त्रय-पूजन-तर्पण

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं हंसः शिवः सोऽहं अं आं सौः श्रीकाम-गिरि-पीठ ब्रह्मात्मक-शक्त्यम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं हंसः शिवः सोऽहं श्रीपूर्णगिरि-पीठ विष्ण्वात्मक-शक्त्यम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं हंसः शिवः सोऽहं श्रीजालन्धर-पीठ रुद्रात्मक-शक्त्यम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३

५. भैरव (अष्ट-भैरव)-पूजन-तर्पण

ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् फां फीं ह्रीं श्रीमन्थान-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१
ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् फां फीं ह्रीं श्रीषट्-चक्र-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२
ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् फां फीं ह्रीं श्रीफट्कार-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३
ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् फां फीं ह्रीं श्रीएकात्म-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४
ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् फां फीं ह्रीं श्रीहविः-भक्ष्य-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५
ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् फां फीं ह्रीं श्रीचण्ड-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥६
ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् फां फीं ह्रीं श्रीभ्रमर-भास्कर-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥७
ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् फां फीं ह्रीं श्रीईशान-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥८

६. सिद्धौघ-पूजन-तर्पण

ह्रीं श्रीं सौः अं श्रीमहा-दुर्गाम्बा-सिद्ध-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१
ह्रीं श्रीं सौः अं श्रीसुन्दर्यम्बा-सिद्ध-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२
ह्रीं श्रीं सौः अं श्रीकरालिकाम्बा-सिद्ध-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३
ह्रीं श्रीं सौः अं श्रीत्रिवाणाम्बा-सिद्ध-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४
ह्रीं श्रीं सौः अं श्रीश्रीमाम्बा-सिद्ध-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५
ह्रीं श्रीं सौः अं श्रीकराल्यम्बा-सिद्ध-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥६

ह्रीं श्रीं सौः अं श्रीखरानताम्बा-सिद्ध-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥७
ह्रीं श्रीं सौः अं श्रीविशालिन्यम्बा-सिद्ध-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥८

७. 'वटुक-त्रय'-पूजन-तर्पण

ह्रीं श्रीं सौः क्लीं फट् श्रीस्कन्द-वटुक-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१
ह्रीं श्रीं सौः क्लीं फट् श्रीचित्र-वटुक-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२
ह्रीं श्रीं सौः क्लीं फट् श्रीविरञ्चि-वटुक-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३

८. 'पद-युग'-पूजन-तर्पण

हसकलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं श्रीप्रकाश-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१
हसकलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं श्रीविमर्श-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२

९. 'दूती-क्रम'-पूजन-तर्पण

अं आं सौः ह्रीं श्रीं सौः श्रीयोन्यम्बा-दूतिका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१
अं आं सौः ह्रीं श्रीं सौः श्रीयोनि-सिद्ध-नाथाम्बा-दूतिका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२
अं आं सौः ह्रीं श्रीं सौः श्रीमहा-योन्यम्बा-दूतिका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३
अं आं सौः ह्रीं श्रीं सौः श्रीमहा-योनि-सिद्ध-नाथाम्बा-दूतिका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४
अं आं सौः ह्रीं श्रीं सौः श्रीदिव्य-योन्यम्बा-दूतिका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५
अं आं सौः ह्रीं श्रीं सौः श्रीदिव्य-योनि-सिद्ध-नाथाम्बा-दूतिका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥६
अं आं सौः ह्रीं श्रीं सौः श्रीशङ्ख-योन्यम्बा-दूतिका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥७
अं आं सौः ह्रीं श्रीं सौः श्रीशङ्ख-योनि-सिद्ध-नाथाम्बा-दूतिका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥८
अं आं सौः ह्रीं श्रीं सौः श्रीपद्म-योन्यम्बा-दूतिका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥९
अं आं सौः ह्रीं श्रीं सौः श्रीपद्म-योनि-सिद्ध-नाथाम्बा-दूतिका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१०

१०. 'मण्डल'-पूजन-तर्पण

ह्रीं श्रीं ऐं अग्नि-मण्डल-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१
ह्रीं श्रीं क्लीं सूर्य-मण्डल-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२
ह्रीं श्रीं सौः सोम-मण्डल-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३

११. 'वीरानष्ट'-पूजन-तर्पण

ह्रीं श्रीं फट् फां फीं श्रीसृष्टि-वीर-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१
ह्रीं श्रीं फट् फां फीं श्रीस्थिति-वीर-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२
ह्रीं श्रीं फट् फां फीं श्रीसंहार-वीर-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३
ह्रीं श्रीं फट् फां फीं श्रीरक्त-वीर-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४
ह्रीं श्रीं फट् फां फीं श्रीयम-वीर-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५
ह्रीं श्रीं फट् फां फीं श्रीमृत्यु-वीर-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥६
ह्रीं श्रीं फट् फां फीं श्रीभद्र-वीर-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥७
ह्रीं श्रीं फट् फां फीं श्रीपरमार्थ-वीर-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥८
ह्रीं श्रीं फट् फां फीं श्रीमार्तण्ड-वीर-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥९
ह्रीं श्रीं फट् फां फीं श्रीकालाग्नि-रुद्र-वीर-भैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१०

१२. 'चतुष्क-षष्टि'-पूजन-तर्पण

ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीमङ्गल-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीचण्डिका-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीकुल्लुका-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीपट्टहा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीकूर्मा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीधनदा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥६
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीगन्धा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥७
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीगगना-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥८
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीमातङ्गा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥९
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीचम्पका-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१०
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीकैवर्ता-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥११
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीमातङ्ग-गमना-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१२
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीसूर्य-भक्ष्या-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१३
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीनभो-भक्ष्या-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१४
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीस्तौतिका-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१५
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीरूपिका-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१६

ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीदंष्ट्रा-पूज्या-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१७
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीधूम्राक्षा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१८
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीज्वाला-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१९
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीगान्धारा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२०
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीगगनेश्वरा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२१
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीमाया-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२२
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीमहा-माया-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२३
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीनित्या-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२४
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीशाला-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२५
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीविश्वा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२६
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीकामिनी-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२७
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीउमा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२८
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीश्रिया-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२९
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीसुभगा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३०
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीसर्वगा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३१
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीलक्ष्मी-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३२
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीविद्या-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३३
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीमीना-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३४
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीअमृता-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३५
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीचन्द्रा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामिं नमः॥३६
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीसिद्धा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३७
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीश्रद्धा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३८
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीअनन्ता-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३९
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीशम्बरा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४०
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीउल्का-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४१
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीत्रैलोक्या-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४२
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीभीमा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४३
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीराक्षसी-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४४
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीमणि-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४५
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीप्रचण्डा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४६

ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीअनङ्गा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४७
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीविधि-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४८
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीअनभिहिता-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४९
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीनन्दिनी-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५०
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीमहा-मना-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५१
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीसुन्दरी-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५२
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीविश्वेश्वरी-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५३
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीकाल-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५४
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीमहाकाल-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५५
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीअभया-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५६
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीविकारा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५७
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीमहा-विकारा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५८
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीसर्वगा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५९
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीसकला-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥६०
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीपूतना-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥६१
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीसर्वरी-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥६२
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीव्योमा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥६३
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं श्रीज्येष्ठा-नाथा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥६४

१३. 'नव-मुद्रा'-पूजन

द्राँ सर्व-संक्षोभिणी-मुद्रायै नमः मुद्राम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१
द्रीं सर्व-विद्राविणी-मुद्रायै नमः मुद्राम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२
क्लीं सर्वाकर्षिणी-मुद्रायै नमः मुद्राम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३
ब्लूं सर्व-वशङ्करी-मुद्रायै नमः मुद्राम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४
सः सर्वोन्मादिनी-मुद्रायै नमः मुद्राम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५
क्रों सर्व-महांकुशा-मुद्रायै नमः मुद्राम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥६
हसखफ्रें सर्व-खेचरी-मुद्रायै नमः मुद्राम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥७
हस्त्रौं सर्व-बीजा-मुद्रायै नमः मुद्राम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥८
ऐं सर्व - योनि - मुद्रायै नमः मुद्राम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥९

१४. वीरावली-पञ्चक (पञ्च-वीर-समूह)-पूजन

ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौः लं श्रीब्रह्म-वीरावल्यै नमः-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥१
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौः वं श्रीविष्णु-वीरावल्यै नमः-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥२
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौः रं श्रीरुद्र-वीरावल्यै नमः-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥३
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौः यं श्रीईश्वर-वीरावल्यै नमः-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥४
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौः हं श्रीसदा-शिव-वीरावल्यै नमः-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः॥५

१५. श्रीमन्मालिनि-मन्त्र-राज-जप

निम्न-लिखित तीन मन्त्रों में से किसी एक मन्त्र का 'जप' करे-

॥ श्रीमालिनी-मन्त्र-राज ॥

(१) ऐं ह्रीं श्रीं ऐं ॐ। अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः। कं खं गं घं ङं। चं छं जं झं ञं। टं ठं डं ढं णं। तं थं दं धं नं। पं फं बं भं मं। यं रं लं वं। शं षं सं हं ळं क्षं। हंसः सोऽहं मालिन्यम्बायै नमः। (पं० योगीन्द्रकृष्ण दौर्गादत्ति जी शास्त्री की कृपा से प्राप्त)

॥ विश्व-गुरु महा-शताक्षरी मन्त्र ॥

(२) ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं, श्रीं श्रीं श्रीं, क्रीं क्रीं क्रीं, ऐं क्लीं सौः, हंसः सोऽहं, नमो भगवते जगन्नाथाय, आं आं आं, ईं ईं ईं, सर्व-कारण-कारणाय, हं ग्लौं, ह्रीं ॐ ह्रों, महा-मन्त्र-राज-रूपाय, श्रीमहा-भैरवी-चक्राधीश्वराय, हसक्षमलवरयूं, सहक्षमलवरयीं क्षौं क्षौं क्षौं, कएईलह्रीं, हसकहलह्रीं, सकलह्रीं, हसकरीं, ह्रीं ह्रीं ह्रीं, हंसः सोऽहं, ॐ महा-ज्वाला-मालिने त्रि-गुणात्मकाय, परम-गुरवे महा-पुरुषाय नमः। (गुप्तावतार बाबा श्री की कृपा से प्राप्त)

॥ श्रीमालिनी-विद्या ॥

(३) नं, ऋं, ॠं, ऌं, ॡं, थं, चं, धं, ईं, णं, उं, ऊं, बं, कं, खं, गं। घं, ङं, इं, अं, वं, भं, यं, डं, ढं, ठं, झं, ञं, जं, रं, टं, पं, छं, लं, आं, सं, अः, हं, षं, क्षं, मं, शं, अं, तं, एं, ऐं, ओं, औं, दं, फं। (महा-माहेश्वर अभिनव गुप्त कृत 'परा-त्रिंशिका' से)

---

[1] (१) कादि-विद्या, हादि-विद्या, सादि-विद्या, षोडशी तथा परोपासकों के ओघ-त्रय पृथक्-पृथक् हैं। जो जिस विद्या का उपासक हो, वह उपर्युक्त ओघ-त्रय के स्थान पर अपने-अपने देवता के ओघ-त्रय का पूजन कर सकता है। विशेष जानकारी के लिए अपने 'गुरु' से पूछना चाहिए।

(२) मन्त्र में 'अष्ट-वीर' बताए गए हैं, किन्तु तन्त्रों में '१० वीर' उल्लिखित हैं। अतः 'अधिकस्य अधिकं फलं' के अनुसार यहाँ '१० वीरों के पूजन' का उल्लेख है।

***

श्रीगुरु-तन्त्रम्

॥ ॐ ह्रीं नमः परम-देवतायै ॥

कैलास - शिखरासीनं, देव - देवं जगद् - गुरुम् ।
शङ्करं रहसि प्रीत्या, पप्रच्छ परमेश्वरी ॥१

॥ श्रीदेव्युवाच ॥

देव-देव! जगद्-वन्द्य! सृष्टि - स्थिति - कारक !
परमेश! महेशान! सर्व - भूत - हिते रत!॥२
त्वत्-प्रसादान्महा-देव! गुह्याद् गुह्य-तरं महत्।
श्रुतं स्तोत्रं च कवचं, देवानां च महेश्वर!॥३
गुह्यं सहस्र - नामाख्यं, कस्मैचिन्न प्रकाशितम्।
तत् सर्वं कृपया देव! मयि सम्यक् प्रकाशितम्॥४
तत् वदस्व महा-देव! यस्मात् सिद्धिर्भवेन्मनोः।
तन्त्राणां सार - भूतं च, मन्त्राणामपि सिद्धिदम्॥५
देवता - प्रीतिदं किञ्चित्, कथयस्व जगद्-गुरो!॥६

॥ श्रीशिव उवाच ॥

धन्याऽसि पार्वति! त्वं हि, सफलं जीवितं तव।
सारात् सार - तरं यन्मां, पृच्छसि त्वं वरानने!॥७
शृणु देवि! महत् सारं, सद्यः सर्व-फल-प्रदम्।
यस्य विज्ञान - मात्रेण, सिद्ध - मन्त्री भवेन्नरः॥८
तवोपरोधाद् देवेशि! गुरु-तन्त्रं सु-दुर्लभम्।
तन्त्राणां सार-भूतं यत्, कथयामि महेश्वरि!॥९
पठनाद् धारणाद् यस्य, दिव्य - ज्ञानं प्रजायते।
एतत् तन्त्रं सदा गोप्यं, मन्त्र-सिद्धि-प्रदायकम्॥१०
तत्रादौ श्रीगुरोर्ध्यानं, वक्ष्ये मुक्ति - प्रदायकम्।
धर्म - कामार्थदं नित्यं, पूजितं वाञ्छित-प्रदम्।
गुरु-भक्ति - प्रदं देवि! मम वक्त्राद् विनिर्गतम्॥११
ब्राह्मे मुहूर्त्ते उत्थाय, बद्ध-पद्मासनः सुधीः।
शिरःस्थाधः - सहस्रारे, पद्मे निज - गुरुं स्मरेत्॥१२

स्व-गुरु-ध्यानम्

मूलादि-ब्रह्म-रन्ध्रान्तं, कुलं ध्यात्वा गुरुं स्मरेत्।
गन्धानुलेपनं शान्तं, वराभय - कराम्बुजम्॥१३
मन्द - स्मितं निज - गुरुं, कारुण्येनावलोकितम्।
वामोरु - शक्ति - संयुक्तं, शुद्धाभरण - भूषितम्॥१४
स्व-शक्त्या दक्ष-हस्तेन, धृत - चारु - कलेवरम्।
वामेनोत्पल-धारिण्या, सु-रक्तया सु-शोभितम्॥१५
परानन्द - रसोल्लास-लोचन - द्वय - पङ्कजम्।
एवं ध्यात्वा ततः शिष्य, उपचारैश्च मानसैः॥१६

आराध्य वाग्भवं (ऐं) देवि! सहस्रं प्रजपेन्मनुम्।
ततः कुल-गुरुं ध्यायेत्, शिष्यः सद्-भक्ति-संयुतः॥१७

कुल-गुरु-ध्यानम्

मूलादि-ब्रह्म-रन्ध्रान्तं, कुलं ध्यात्वा गुरुं स्मरेत्।
प्रह्लादानन्द - नाथाख्यं, सकलानन्दमेव च॥१८
कुमारानन्द - नाथं च, वशिष्ठानन्द - नाथकम्।
क्रोधानन्द - सुखानन्दौ, ज्ञानानन्दं ततः परम्॥१९
बोधानन्दमथाभ्यर्च्य, ध्यायेत् कुल - मुखोपरि!॥२०
महा-रस - रसोल्लास - हृदयाघूर्ण - लोचनाः।
कुलालिङ्गन - सम्भिन्न - चूर्णिताशेष - तामसाः।
कुल-शिष्यैः परि-वृताः, पूर्णान्तःकरणोद्यताः॥२१
वराभय - युताऽशेष - कुल - तन्त्रार्थ - वादिनः।
एवं कुल-गुरुं ध्यात्वा, महा - सिद्धीश्वरो भवेत्॥२२
रहस्यमद्भुतं प्रोक्तं, गोप्तव्यं पशु - सङ्कटे॥२३
कुल - नाथं परित्यज्य, ये शाक्ताः कुल - सेविनः।
तेषां दीक्षा च यागश्च, अभिचाराय कल्पते।
तस्मात् सर्व - प्रयत्नेन, कुलीनं गुरुमाश्रयेत्॥२४
कुलीनः सर्व-मन्त्राणामधिकारीति गीयते।
दीक्षा-गुरुः स एव स्यात्, सर्व-मन्त्रस्य पारगः॥२५
गुरवो बहवः सन्ति, शिष्य-वित्तापहारकाः।
एकः श्रेष्ठो भवेत् तेषां, भुक्ति-मुक्ति - प्रवर्त्तकः॥२६
एक एव गुरुर्देवि! सर्वत्र परि - गीयते।
भेदोऽस्य च न कर्त्तव्यः, सर्वं गुरु-मयं जगत्॥२७

श्रीगुरु-लक्षणं तस्य महिमा च

श्रीगुरोर्लक्षणं वक्ष्ये, शृणु देवि ! त्रि-लोचने!
गुरुरेकः शिवः प्रोक्तः, सोऽहं देवि! न संशयः॥२८
गुरुस्त्वमसि देवेशि! मन्त्रोऽपि गुरुरुच्यते।
अतो मन्त्रे गुरौ देवे, न भेदश्च प्रजायते॥२९
कदाचित् तु सहस्रार - पद्मे ध्येयो गुरुः सदा।
कदाचित् हृदयाम्भोजे, कदाचिद् दृष्टि-गोचरे॥३०
गुरुरित्यक्षरं देवि!, जिह्वाग्रे यस्य वर्तते।
तस्य किं विद्यते मोहात्, पाठे वेदस्य किं वृथा॥३१
गकारोच्चार - मात्रेण, ब्रह्म - हत्या विनश्यति।
उकारोच्चारतो देवि!, मुच्यते जन्म-पातकात्॥३२
रेफोच्चारण - मात्रेण, उकारोच्चारणात् पुनः।
विसर्गोच्चारणात् कोटि - जन्मगं पातकं हरेत्॥३३
गुरुरित्यक्षरं देवि!, जपतो मम निश्चितम्।
ब्रह्म-हत्या प्रोक्ता येन, विनश्यति न संशयः॥३४
पर्शुरामो मातृ-वधात्, देवेन्द्रो ब्रह्म-हिंसनात्।
पातकाद् यदि मुक्तोऽभूत्, गुरूच्चार - मात्रतः॥३५
ब्रह्मा रुद्रश्च विष्णुश्च, पार्वती परमेश्वरी।
इन्द्रादयस्तथा देवा, यक्षाद्याः सिद्ध-देवताः॥३६
गङ्गाद्याः सरितः सर्वा, गन्धर्वाः सर्प-जातयः।
स्थावरा जङ्गमाश्चान्ये, पर्वताः सर्व-भौतिकाः॥३७
एते चान्ये च तिष्ठन्ति, नित्यं गुरु - कलेवरे।

श्रीगुरोस्तृप्ति-मात्रेण, तृप्तिरेषां च जायते॥३८
न गुरोरधिकं शास्त्रं, न गुरोरधिकं तपः।
न गुरोरधिकं मन्त्रं, न गुरोरधिकं फलम्॥३९
न गुरोरधिका देवी, न गुरोरधिकः शिवः।
न गुरोरधिका मुक्तिर्न गुरोरधिको जपः॥४०
गुरुः पिता गुरुर्माता, गुरुर्देवो महेश्वरः।
देवे रुष्टे गुरुस्त्राता, गुरौ रुष्टे न कश्चन॥४१
उत्पादक-ब्रह्म-गात्रोर्गरीयान् ब्रह्मदः पिता।
तस्मान्मन्यते सततं, पितुरप्यधिकं गुरुम्॥४२
गुरौ मनुष्यता-बुद्धिः, शिष्याणां यदि जायते।
न हि तस्य भवेत् सिद्धिः, कल्प-कोटि-शतैरपि॥४३
तस्माद् देवेशि! नियतं, श्रीगुरुं शिव-रूपिणम्।
सञ्चिन्तयेदतः प्राज्ञस्ततः सिद्धिमवाप्नुयात्॥४४
श्रीनाथं शिव-रूपं च, गुरु-पत्नीं महेश्वरीम्।
चिन्तयेत् सर्वदा प्राज्ञो, भेदान्नरकमाप्नुयात्॥४५
मन्त्रे वा गुरु-देवे वा, न भेदं यस्तु कल्पयेत्।
तस्य तुष्टा जगद्-गौरी, किं न दद्याद् दिने दिने॥४६
गुरु-सेवां प्रकुर्वाणो, यस्तु मृत्युमवाप्युयात्।
स मुक्तः सर्व-पापेभ्यः, शिव-लोकं स गच्छति॥४७
अज्ञानादिह देवेशि! भ्रम-बुद्धिः प्रजायते।
पामराणां मानवानां, सर्व-सिद्धिर्विनश्यति॥४८
अज्ञानात् पामरो लोके, विश्वासं न गुरौ भवेत्।
तस्य कल्याणि! मन्त्रादौ, मम वाक्ये कथं रतिः॥४९

पाण्डित्य-कविताऽऽदीनां, मोहालोक-भयान्नृणाम्।
न विश्वासो भवेद् देवि! श्रीनाथे जगदीश्वरे॥५०
क्वचित् पाखण्ड-संसर्गात्, क्वचिन्मोहात् क्वचित् कुलात्।
न विश्वासो भवेद् देवि! गुरु-देवे सनातने॥५१
गुरु-सेवामकृत्वा तु, ये भक्ताः कुल-सेविनः।
तेषां मन्त्राश्च देवाश्च, प्रसीदन्ति न सर्वदा॥५२
गुरोर्हितं प्रकर्त्तव्यं, वाङ्-मनः-काय-कर्मभिः।
अहिताचरणाद् देवि! विष्ठायां जायते कृमिः॥५३
कायिकैः परिचर्यादि, वाग्भिः स्तवनमेव च।
मानसे कुशलं देवि! भावयेन्नित्यशः गुरोः॥५४
मन्त्र-वत् पालयेन्नित्यं, गुरु-वाक्यं विशेष-वित्।
स्थाणु-वत् तिष्ठते नित्यं, गुरोरग्रे महेश्वरि!॥५५
तिष्ठन्तु ज्ञातयः सर्वे, निन्दन्तु स्व-जना नराः।
गर्जन्तु भ्रातरः सर्वे, शरीरं मे विनश्यतु॥५६
तथापि न परि-त्याज्या, गुरु-सेवा सु-दुर्लभा।
इति येषां चित्त-मतिर्ज्ञान-ध्यान-परायणा॥५७
तस्य तुष्टा महा-माया, चतुर्वर्गान् प्रयच्छति।
शिष्याश्च बहवः सन्ति, सद्-गुरोर्मम सु-व्रते!॥५८
कस्यचिज्जायते तेषां, सद्-भक्तिरनपायिनी॥५९
धिग् धनं धिग् बलं तेषां, धिक् कुलं धिग् विचेष्टितं।
यस्य नोत्पद्यते भक्तिर्गुरु - देवे महेश्वरे॥६०
गुरु-सेवा गुरु-ध्यानं, गुरु-स्तोत्रं गुरोर्जपः।
गुरोः पूजा गुरोस्तृप्तिः, गुरोर्भक्तिर्नृणां यदि॥६१

स्त्रीभिः पुत्रैश्च पौत्रैश्च, पितृ-मातृ-स्व-बन्धुभिः।
विधातव्या गुरोः सेवा, सत्यं सत्यं वरानने!॥६२
ग्राम-मध्ये स्थितः शिष्यस्त्रि-सन्ध्यं प्रणमेद् गुरुम्।
क्रोश-मध्ये स्थितो नित्यमेक-वारं समाचरेत्॥६३
योजनान्तः-स्थितः शिष्यो, वर्षे वार-त्रयं नमेत्।
अशक्तश्चैक-वारं वा, स्व-वर्गान् वा नियोजयेत्॥६४
विनीतं भ्रातरं वापि, पुत्रं वा प्रिय-दर्शनम्।
पितरं वा नियुञ्जीत, गुरोः सन्तोष-कर्मणि॥६५
एक-ग्राम-स्थितः शिष्यो, नारीश्चैव स्थितोऽपि वा।
गुरु-पूजां विना नैव, पृथक् पूजां समाचरेत्॥६६
तस्यैवाज्ञा-वशाद् वापि, यदि देवीं प्रपूजयेत्।
गुरोः पादाब्जयोरादौ, दद्यात् पुष्पाञ्जलि-त्रयम्॥६७
देवी-पूजा गुरोः पूजा, तृप्तिश्च गुरु-तर्पणम्।
तद्-भक्तिर्गुरु-भक्तिश्च, तत्-स्तोत्रं गुरु-वन्दनम्॥६८
गन्धैः पुष्पैश्च धूपैश्च, दीपैर्माल्यैश्च भूषणैः।
वस्त्रैर्विविध-भक्त्यर्थैर्नित्यं सम्पूजयेद् गुरुम्॥६९
यानैर्ग्रामैर्वाहनैश्च, पालङ्कैर्दिव्य-भोजनैः।
व्यञ्जनैर्दिव्य - भक्ष्यैश्च, छत्र - पीठासनादिभिः॥७०
स्वीयाभिलषितैर्द्रव्यैस्तस्याभिलषितैरपि ॥७१
यस्तु सम्पूजयेच्चण्डीं, गुरुं ब्रह्म-स्वरूपिणम्।
तस्य तुष्टौ भवेन्नित्यं, शिवश्चाहं न संशयः॥७२
मम सन्तोषतो देवि!, तव प्रीतिश्च जायते।
तव सन्तोष-मात्रेण, जीवन्मुक्तो भवेन्नरः॥७३

किं दानं वा तपो होमः, किं देवि! सुर-पूजनम्।
किं स्नानं किं फलं तस्य, यस्य न प्रीणयेद् गुरुः॥७४
पुरश्चर्या महा-देवि!, मयोक्ता बहु-रूपिका।
अवश्यं पञ्चमाङ्गेन, कार्यैक-फल-दायिनी॥७५
तस्य स्थानं विल्व-मूलं, श्मशानं शून्य-मन्दिरम्।
देवालयं नदी-तीरं, पर्वतं गिरि-कन्दरम्॥७६
एक-लिङ्गं वनं रम्यं, कण्ठ-पूर्ण-जलं तथा।
एतस्मादपि देवेशि!, गुरोः स्थानं महत् फलम्॥७७
तत्रैव यः स्मरेद् देवि!, किंवा सम्पूजयेत् शिवाम्।
तत् सर्वं कोटि-फलदं, शीघ्रं सिद्धिः प्रजायते॥७८
एकधा गुरु-गेहस्थः, शिष्यो यदि जपेन्मनुम्।
सिद्ध-पीठस्ततो ज्ञेयं, फलं तस्य प्रजायते॥७९
गुरोर्नाम न वक्तव्यं, कदाचिदपि पार्वति!
आनन्द-नाथं श्री-पूर्वं, तर्पणादौ नियोजयेत्॥८०
गुरोः स्थानं च कल्याणि!, श्री-पूर्वं समुदीरयेत्।
तत् स्थानं चैव कैलासं, सर्वदा परि-चिन्तयेत्॥८१
वाराणसी-प्रयागादौ, गत्वा यत् फलमाप्नुयात्।
तत् फलं कोटि-गुणितं, गुरोः स्थानस्य दर्शनात्॥८२
गुरोः स्थानं समालोक्य, दण्ड-वत् प्रणमेत् सुधीः।
सिद्ध-पीठ-धिया सर्वं, ततः सिद्धिमवाप्नुयात्॥८३
गुरोः स्थानं कैलासं, गृहं चिन्ता-मणेर्गृहम्।
वृक्षाली कल्प-वृक्षाली, भावयेत् सर्वदा हृदि॥८४
वल्ली कल्प-लता ज्ञेया, जल-रेखा सुधोपमा।

पुष्पाणि मणि-पुष्पाणि, सर्वदा परि-चिन्तयेत्॥८५
गुरु-गेह-स्थिता दास्यो, भैरव्यः परि-कीर्तिताः।
भृत्या भैरव-रूपाश्च, भावयेन्मति-मान् सदा॥८६
भयं क्रोधं तथाऽऽलस्यं, परि-हासं प्रलापनम्।
मिथ्या मोहं तथा द्रोहं, वर्जयेत् सर्वदा गुरौ॥८७
गुरु-गेह-स्थितः शिष्यो, भृत्य-वत् प्रचरेत् सदा।
अनन्य-चित्त-भावेन, येन प्रीतो भवेद् गुरुः॥८८
वरं प्राण-परित्यागः, शिरश्छेदोऽपि वा भवेत्।
तथापि न परित्याज्यं, गुरु-वाक्यं कदाचन॥८९
गुरु-देवं समालोक्य, चित्ते सञ्चिन्त्य देवताम्।
अष्टाङ्ग-प्रणिपातेन, नमस्कारं समाचरेत्॥९०
बाहुभ्यां शिरसा पद्भ्यां, श्रोत्राभ्यां च नसा तथा।
प्रणाममाचरेन्नित्यं, गुरु-देवांश्च साधकः॥९१
प्रणम्य गुरु-देवं च, शिष्यः स्थाणुरिवाचलः।
लब्ध्वा त्वाज्ञां गुरोः पश्चात्, तस्य पाद-तले वसेत्॥९२
गुरौ स्थिते स्वयं स्थाता, आसने च स्वयं वसेत्।
गच्छन्तमनुगच्छेत् जल्पन्तं मौनमाचरेत्॥९३
अन्यस्मिन् प्रेरिते कार्ये, स्वयं दास-वदाव्रजेत्।
गुरोर्योनिं गुरोः पीठं, गुरुं दद्यान्न चाश्रयेत्।
गुरोर्वस्त्रमलङ्कारं, कदाचिन्नापि धारयेत्॥९४
गुरु-गेह-स्थितः शिष्यो, यद् यत् पुण्यं समाचरेत्।
तत् सर्वमक्षयं प्रोक्तं, पुण्य-तीर्थ-शताधिकम्॥९५
गुरु-पादोदकं यस्तु, मूर्ध्नि सन्धारयेत् सुधीः।
स तीर्थ-शत-कोटीनां, फलं दश-गुणं लभेत्॥९६
त्रि-सन्ध्यं पीयते यस्तु, गुरु-पादोदकं सुधीः।
तस्य नास्ति पुनर्जन्म, संसारे मोह-वर्त्तने॥९७
एक-ग्राम-स्थितः शिष्यो, भिन्न-ग्राम-स्थितोऽपि वा।
त्रि-सन्ध्यं प्र-पिबेन्नित्यं, गुरु-पादार्चनं जलम्॥९८
अकाल-मृत्यु-हरणं, रोग-व्याधि-विनाशनम्।
सुख-मोक्ष-प्रदं श्रीमद्-गुरु-पादोदकं पिवेत्॥९९
गुरु-पादोदकं दृष्ट्वा, प्रदक्षिणमनु-व्रजन्।
प्रणम्य शिरसा देवं, पश्चात् पानं विधीयते॥१००
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च, सर्वे च पितृ - देवताः।
तिष्ठन्ति श्रीगुरोः पाद - पद्मार्चिते शुभे जले॥१०१
गुरु-पादोदकं यस्तु, नित्यं पिवति मानवः।
धर्मार्थ-काम - मोक्षाणामधिपो जायते च सः॥१०२
गुरु - पादार्चितं तोयं, लङ्घयेन्न कदाचन।
जलेन क्षालयेत् शिष्यः, पर-लङ्घनाद् भयात्॥१०३
गुरोरग्रे समं वापि, न गच्छेत् पामरो नरः॥१०४
त्रि-सन्ध्यं पूजयेद् यस्तु, गन्ध - पुष्पैर्जगद्-गुरुम्।
तस्य किं यन्त्र-पूजादौ, विधानं न्यास-जालकम्॥१०५
यद् यद् वारं गुरोः स्थानं, गम्यते कार्य-कारणात्।
तत्तद् वारं नमेत् प्राज्ञो, गुरु-देवं सनातनम्॥१०६
शुक्ल-पुष्प-धरं माल्यं, श्रद्धया ग्रथितं स्वयम्।
घृष्टं च चन्दनं श्वेतं, गुरोरपि निवेदयेत्॥१०७

तस्य मोक्षो भवेद् देवि! त्वयि भक्तिश्च जायते॥१०८
गुरोरन्नं महा-देवि!, यस्तु भक्षणमाचरेत्।
कोटि-जन्मार्जितं पापं, तत्-क्षणात् तस्य नश्यति॥१०९
न स्नानं पाद - शौचं च, न चैवाचमनं चरेत्।
प्राप्ति-मात्रेण भोक्तव्यं, नैव स्थानं विचिन्तयेत्॥११०
न ब्राह्मण्यं न कौलीन्यं, न जातीनां विचारणम्।
न ज्ञाति-सुत-बन्धूनां, सम्मानं परि-चिन्तयेत्॥१११
एक-स्थान- स्थितं चान्नं, स-तीर्थं मण्डली-कृतम्।
भोक्तव्यं मोक्षदं देवि!, शूद्र-स्पृष्टं न चिन्तयेत्॥११२
गुरोरन्नं सुधा-बुद्ध्या, यस्तु खादति मानवः।
शिवोऽहं तस्य देवेशि!, तुष्टो भवति नान्यथा॥११३
कदाचित् परमेशानि!, यदि स्याद् वै भ्रमो भवेत्।
न तस्य निष्कृतिर्दृष्टा, कल्प-कोटि-शतैरपि॥११४
गुरोरुच्छिष्टकं देवि!, सर्वाङ्गे चानु-लेपयेत्।
वज्रोऽपि तस्य गात्राणि, न भिन्दन्ति कदाचन॥११५
गुरोरुच्छिष्टकं देवि!, भुक्ति-मुक्ति-प्रदं भवेत्।
अवश्यं कौलिकैः शिष्यैर्भक्षितव्यं दिने दिने॥११६
गुरोरुच्छिष्टं देवि!, तवोच्छिष्टं हितं भवेत्।
तवोच्छिष्टं महा-देवि!, ब्रह्मादीनां सु-दुर्लभम्॥११७
अतः सम्प्रार्थ्यते नित्यमिन्द्राद्यैस्त्रिदशैः सदा॥११८
गुरोरुच्छिष्टमन्नं यो, भक्षयेत् भक्ति-भावतः।
अन्न-पूर्णा जगद्धात्री, तस्मैश्वर्यं प्रयच्छति॥११९
न भक्षयेद् यस्तु मोहाद्, गुरोरुच्छिष्टकं प्रिये!
तस्य क्रुद्धा भवेस्त्वं हि, विपत्तिश्च पदे पदे॥१२०
यदि भाग्य-वशेनैव, तदुच्छिष्टं लभेन्नरः।
प्रणम्य मूर्ध्ना नेतव्यं, शुद्धाशुद्धं न चाचरेत्॥१२१
इति ते कथितं तन्त्रं, रहस्यं परमाद्भुतम्।
न प्रकाश्यः पशोरग्रे, यतो हानिश्च जायते॥१२२
गोपनीयं महत् तन्त्रं, यद् यत् कीर्तयतेऽधुना।
तत्त्वं शृणु वरारोहे! यतः सिद्धिरदूरतः॥१२३
गुरु - शुश्रूषणं वक्ष्ये, लोकानां हित - काम्यया।
यस्य विज्ञानतो देवि! पुरश्चर्या-फलं लभेत्॥१२४
तदर्थं श्रीगुरोः सेवा, पुरश्चर्या यथोच्यते।
पुरश्चरण-हीनस्तु, गुरु-सेवामथाचरेत्॥१२५
नमस्कृत्य गुरोः स्थानं, गन्तुं यात्रा-विधिं चरेत्।
पूर्वोक्त-रूप-वत् सेवां, तस्य नित्यं समाचरेत्॥१२६
रात्रि-शेषे समुत्थाय, पूर्वोक्त-ध्यानमाचरेत्।
ततः श्रीगुरु-देवस्य, निकटं प्रविशेत् शनैः।
प्रणम्य दण्ड-वत् पादे, पर्यङ्कं भ्रामयेत् त्रिधा॥१२७
नियतं शिव-रूपं तं, व्यजनं परि-कल्पयेत्।
अथ द्वारं पुरस्कृत्य, स्वयं कर-पुटौ भवेत्॥१२८
त्यक्त-निद्र-गुरोः पश्चात्, तन्मुखं परि-पश्यति।
ततो भृत्य-समः शिष्यो, गुरोराज्ञां समाचरेत्॥१२९
प्रातरारभ्य सच्छिष्यो, गुरोरनुचरो भवेत्।
स्नानं सन्तर्पणं पूजां, त्यक्त्वा गुरु-परो भवेत्॥१३०
भृत्यान् निवर्त्य सच्छिष्यो, दास-वत् स्वयमाचरेत्।
परिचर्या गुरोः कार्या, तस्मै प्रीति-परो भवेत्॥१३१

गुरु-स्नानं कारयित्वा, स्वयं तु स्नानमाचरेत्।
तत्-पादयोर्जलं मूर्ध्नि, दत्वा स्नायी स्वयं भवेत्॥१३२
तस्य पूजां ततः कृत्वा, तस्य पादोदकं पिबेत्।
ततो भुंक्ते गुरोः पश्चात्, तदुच्छिष्टं च भक्षयेत्॥१३३
तस्मिन् शयिते देवेशि! पाद-सम्मार्जनं चरेत्।
सु-सज्जीकृत्य ताम्बूलं, दत्वा शुश्रूषणं चरेत्॥१३४
तदाज्ञां प्राप्य शयनं, स्वयं कुर्यात् स-चेतनः।
एवं गुरोः स्वयं शिष्यो, नित्यं सेवां समाचरेत्॥१३५
वर्षमेकं महा-देवि!, प्रत्यहं गुरु-दैवते।
ततः सिद्ध-मनुर्मन्त्री, महा-सिद्धीश्वरो भवेत्॥१३६
एतत् शुश्रूषणं नित्यमेक-चित्तेन कारयेत्।
चलच्चित्तेन देवेशि!, वृथैव परि-कल्पयेत्॥१३७
गुरु-सेवां स्वयं कृत्वा, निष्क्रियः परि-चारकः।
ततो रात्रौ जपेन्मन्त्रं, गुरु-पाद-तलान्तिके॥१३८
ततो वर्षान्तरे जाते, गुरुः सन्तुष्ट-मानसः।
परमाशीर्वचो दद्यात्, शिष्याय भक्तयेऽर्थिने।
सिद्ध-मन्त्रो भवेस्त्वं हि, गच्छ शीघ्रं निजालयम्॥१३९
इत्युक्ते च गुरौ देवि! शिष्योऽपि दत्त-दक्षिणः।
विभवस्यानुरूपेण, सर्वस्वं वा निवेदयेत्॥१४०
तदर्द्धं वा तदर्द्धं वा, अर्जकस्यार्द्धमेव च॥१४१
स्व-वर्गान् परितोष्यैव, उद्धृत्तं यच्च जायते।
तदेव गुरवे दद्यात्, प्रत्यक्षाय शिवाय च॥१४२
तत्-पत्नीं तत्-सुतं भ्रातॄन्, बन्धु-वर्गांश्च तोषयेत्।
वस्त्रैर्नाना-विधैर्द्रव्यैः, ततः सिद्धीश्वरो भवेत्॥१४३
इत्येतत् कथितं तुभ्यं, गुरु-तन्त्रं मम प्रियम्।
गोपनीयं सदा यत्नात्, पठनीयं गुरोः स्थले॥१४४
शिवालये नदी-तीरे, विल्व-मूले पठेत् सुधीः।
प्रातर्मध्याह्न-सायाह्ने, पाठयेच्च पठेत् सुधीः॥१४५
इदं मयोक्तं कल्पं हि, न प्रकाश्यं कदाचन।
नाभक्ताय प्रदातव्यं, नास्तिकाय कदाचन॥१४६
नष्टाय च महा-देवि! मलिनाय न दापयेत्।
गुरु-भक्ति-विहीनाय, क्रोध-लोभ-रतात्मने॥१४७
अनिन्दकाय शुद्धाय, तन्त्र-राजं प्रकाशयेत्।
यस्य गेह-स्थितं देवि!, एतत् तन्त्रं तव प्रियम्॥१४८
न च वह्नि-भयं तस्य, न च चौर - भयं भवेत्।
न च मारी-भयं तस्य, शत्रुतो न भयं भवेत्॥१४९
दीक्षां कृत्वा गुरोः स्थाने, इदं नित्यं समभ्यसेत्।
पुरश्चरण-कालेऽपि, निर्जने च पठेन्नरः॥१५०
इत्युक्तं मम तन्त्र-राजमतुलं पुण्यं यशस्यं कृती,
नित्यं शम्भु-महेश्वरी-गुरु-पदं ध्यात्वा सदा यः पठेत्।
तस्य स्यात् किल भक्तिरात्म-घटिता नित्यं कर-स्थायिनी,
वश्यं याति मही-पतिः, प्रति-दिनं लक्ष्मीश्वरोऽयं भवेत्॥१५१

॥ इति श्रीपार्वती-शिव-संवादे श्रीगुरु-तन्त्रं समाप्तम् ॥

❋ ❋ ❋

हिन्दी गुरु-तन्त्र

कैलाश पर्वत के शिखर पर विराजमान **जगद्-गुरु देवाधिदेव शङ्कर** से एकान्त में प्रेम से **परमेश्वरी** ने पूछा।।१।।

श्री देवी ने कहा—हे जगद्-वन्दनीय **देवाधिदेव!** आप सृष्टि-स्थिति-प्रलय करनेवाले हैं, परमेश्वर और सभी प्राणियों के हितैषी हैं। आपके अनुग्रह से, हे **महा-देव!** मैंने गुरु और देवताओं के **गुप्त से गुप्त स्तोत्र** और **कवच** सुन लिए हैं। जो **गुप्त सहस्त्र-नाम** किसी को नहीं बताया गया है, उस सबको आपने कृपा कर समुचित रूप से मुझे बता दिया है।।२-४

हे **जगद्-गुरु महा-देव!** अब जो सार से भी सार गुप्त-तम है, जिसे संसार में किसी को नहीं बताया गया है, जिससे **मन्त्र की सिद्धि** होती है और जो **तन्त्रों का सार-भूत** है, **मन्त्रों की सिद्धि** देनेवाला और **देवता की प्रसन्नता** दिलानेवाला है, उसे सुनना चाहती हूँ। उसे कुछ बताइए।।५-६

श्रीशिव ने कहा—हे **सु-मुखि पार्वती!** तुम धन्य हो और तुम्हारा जीवन सार्थक है क्योंकि तुमने मुझसे सार से भी सार बात को पूछा है।।७

हे देवि! जिसके जानने मात्र से मनुष्य **मन्त्र-सिद्ध** हो जाता है, उस तुरन्त फल-दायक महा-सार को सुनो।।८

हे **देवेशि महेश्वरि!** तुम्हारे आग्रह से तन्त्रों के सार-भूत अति दुर्लभ '**गुरु-तन्त्र**' को बताता हूँ, जिसके पढ़ने या समझने से **दिव्य ज्ञान** मिलता है। **मन्त्र-सिद्धि** को देनेवाले इस तन्त्र को सदा गुप्त रखना चाहिए।।९-१०

पहले धर्मार्थ-काम-मोक्ष देनेवाले, नित्य पूज्य, अभीष्ट-फल-दायक, गुरु-भक्ति-दाता, अपने मुख से निकले **श्रीगुरु-ध्यान** को कहूँगा। हे देवि! बुद्धिमान् को ब्राह्म-मुहूर्त्त में उठकर पद्मासन बाँधकर शिर में स्थित **अधोमुख सहस्त्र-दल पद्म** में अपने **गुरु का ध्यान** करना चाहिए।।११-१२

स्व-गुरु का ध्यान

शुद्ध-स्फटिक-सङ्काशं, शुद्ध-क्षौम-विराजितम्।
गन्धानुलेपनं शान्तं, वराभय-कराम्बुजम्।।१
मन्द-स्मितं निज-गुरुं, कारुण्येनावलोकितम्।
वामोरु-शक्ति-संयुक्तं, शुद्धाभरण-भूषितम्।।२
स्व-शक्त्या दक्ष-हस्तेन, धृत-चारु-कलेवरम्।
वामेनोत्पल-धारिण्या, सु-रक्तया सु-शोभितम्।।३
परानन्द-रसोल्लास-लोचन-द्वय-पङ्कजम्।

गुरु-देव के शरीर की आभा निर्मल स्फटिक के समान है और स्वच्छ रेशमी वस्त्र वे पहने हैं। चन्दन का लेप किए हैं और उज्ज्वल आभूषणों से शोभायमान हैं। दोनों कर-कमलों में वर और अभय मुद्रा है। सुन्दर शरीर और शान्त स्वरूप है। मुख पर मुस्कान है और दया-पूर्वक देख रहे हैं। उनके बाँएँ उरु (जाँघ) से सटी हुई, उनकी शक्ति (पत्नी) विराज-माना हैं, जो अपने बाँएँ हाथ में लाल कमल लिए हैं और दाँएँ हाथ से उन्हें पकड़े हुए उन पर बड़ा प्रेम रखती हैं। गुरु-देव के दोनों नेत्र परमानन्द के रसोल्लास से परिपूर्ण हैं।

इस प्रकार ध्यान कर शिष्य मानसोपचारों से उनकी पूजा कर हे देवि! **वाग्भव मन्त्र (ऐं)** का एक सहस्त्र बार जप करे। तब भक्ति-पूर्वक शिष्य **कुल-गुरुओं का ध्यान** करे।।१३-१७

मूलाधार से लेकर **ब्रह्म-रन्ध्र** तक व्याप्त '**कुल**' अर्थात् **कुण्डलिनी शक्ति** का ध्यान कर **कुल-गुरुओं** अर्थात् **दिव्यौघ, सिद्धौघ** और **मानवौघ गुरुओं** का स्मरण करे। यथा—**प्रह्लादानन्दनाथ, सकलानन्दनाथ, कुमारानन्दनाथ, वशिष्ठानन्दनाथ, क्रोधानन्दनाथ, सुखानन्दनाथ, ज्ञानानन्दनाथ** और **बोधानन्दनाथ** का अर्चन कर '**कुल-मुख**' अर्थात् **कुण्डलिनी-मार्ग सुषुम्ना** के ऊपरी छिद्र के ऊपर अर्थात् **ब्रह्म-रन्ध्र** में इन सब **त्रिविध गुरुओं का ध्यान** करे।।१८-२०

कुल-गुरुओं का ध्यान

महा-रस-रसोल्लास-हृदयाघूर्ण-लोचनाः।
कुलालिङ्गन-सम्भिन्न-चूर्णिताशेष-तामसाः।।१
कुल-शिष्यैः परि-वृताः, पूर्णान्तःकरणोद्यताः।
वराभय-युताऽशेष-कुल-तन्त्रार्थ-वादिनः।।२

ये सभी '**कुल-गुरु**' परमानन्द के रस से उल्लसित हृदयवाले हैं। इनके नेत्र मस्ती से भरे हुए हैं। '**कुल**' अर्थात् **कुण्डलिनी** के सम्पर्क में निरन्तर रहने से इनका सारा तमो-भाव नष्ट हो चुका है और ये **कौल-मार्गावलम्बी शिष्यों** से घिरे हुए पूरे अन्तः-करण से कृपा करने के लिए सदा उद्यत रहते हैं। ये वर और अभय मुद्रा से युक्त हैं और **कुल-धर्म** के रहस्य को बतानेवाले हैं। इस प्रकार **कुल-गुरुओं का ध्यान** करने से साधक बड़ी-से-बड़ी सिद्धियों को प्राप्त कर लेता है।।२१-२२

यह अद्‌भुत रहस्य है, जिसे अज्ञानियों को नहीं बताना चाहिए। जो शाक्त अर्थात् शक्ति (देवी) के उपासक **कौल-मार्ग के ज्ञाता गुरु (नाथ)** को छोड़कर अर्थात् **कौल गुरु** से दीक्षा लिए बिना कुल-द्रव्य (मद्य, मांसादि) का सेवन करते हैं, उनकी दीक्षा मात्र अभिचार अर्थात् मारण-मोहनादि षट्-कर्मों के रूप में परिणत होती है। इसलिए प्रयत्न करके कुलीन और **कौल धर्म के ज्ञाता गुरु** से ही दीक्षा लेनी चाहिए।।२३-२४

कुलीन अर्थात् **कौल साधक** ही सभी मन्त्रों का अधिकारी है। वह दीक्षा देनेवाला **वास्तविक गुरु** है और वह सभी मन्त्रों में पारङ्गत होता है। शिष्य से **धन लेनेवाले गुरु** बहुत मिलते हैं, परन्तु उनमें से जो 'भोग' और 'मोक्ष' दोनों को दिलाने में समर्थ हो, वही **श्रेष्ठ गुरु** है। वास्तव में **गुरु 'एक' शिव ही हैं**, नाम और रूप-भेद से वे ही सर्वत्र मिलते हैं। उनमें भेद नहीं करना चाहिए क्योंकि सबमें '**शिव**' **ही गुरु-रूप में प्रतिष्ठित** होते हैं।।२५-२७

हे त्रिनेत्रे, देवि! मैं **श्रीगुरु-देव** के लक्षण बताता हूँ, सुनो। **श्रीगुरु-देव** एक-मात्र '**शिव**' ही कहे गए हैं। वह मैं ही हूँ, इसमें सन्देह नहीं। हे देवेशि! तुम भी '**गुरु**' हो और '**मन्त्र**' भी '**गुरु**' कहा गया है। अतः **मन्त्र, देवता** और **गुरु-देव** में कोई अन्तर नहीं है। कभी तो, ध्यान करते समय, **सहस्र-दल-कमल** के मध्य में **गुरु-देव** का निरन्तर ध्यान किया जाता है, तो कभी, पूजा करते समय, उनका ध्यान **हृदय-कमल** के ऊपर और कभी, **गुरु** के प्रत्यक्ष उपस्थित होने पर, अपनी दृष्टि द्वारा उनका ध्यान किया जाता है।।२८-३०

हे देवि! जो अपनी जीभ द्वारा '**गुरुः**' इन दो अक्षरों का उच्चारण करता है, उसे वेदादि का पाठ करने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि '**ग**' अक्षर के उच्चारण मात्र से ब्रह्म-हत्या-जैसे पाप नष्ट हो जाते हैं और '**उ**' अक्षर के उच्चारण से जन्म-जन्मान्तर के पापों का नाश हो जाता है। रेफ अर्थात् '**र**' अक्षर और उसके बाद पुनः '**उ**' अक्षर तथा **विसर्ग** का उच्चारण करने से कोटि जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं। हे देवि! इन दो अक्षरों '**गुरुः**' के जपने से ही ब्रह्मा का मस्तक काटने के कारण लगे ब्रह्म-हत्या के पाप से मुझे मुक्ति मिली थी, इसमें सन्देह नहीं। इसी प्रकार '**गुरुः**' का उच्चारण करने से ही **परशुराम** मातृ-वध के और **देवराज इन्द्र** ब्रह्म-हत्या के पाप से मुक्त हुए थे।।३१-३५

ब्रह्मा, विष्णु, महेश, परमेश्वरी पार्वती, इन्द्रादि देवता, कुबेरादि यक्ष, सिद्ध, गन्धर्व, गङ्गादि नदियाँ, नागादि सर्प-जातियाँ, पर्वतादि स्थावर, जङ्गम और इनके अतिरिक्त अन्य सभी जीव **गुरु-देव** के

शरीर में सदा विद्यमान रहते हैं। अत: **श्री गुरु** के संतुष्ट होने पर देवादि सभी उक्त लोग प्रसन्न हो जाते हैं।।३६-३८

गुरु से बढ़कर न शास्त्र हैं, न तपस्या। **गुरु** से बढ़कर न मन्त्र हैं, न स्वर्गादि फल। **गुरु** से बढ़कर न देवी हैं, न शिव। **गुरु** से बढ़कर न मोक्ष है, न जप। **गुरु-देव** ही सर्व-श्रेष्ठ हैं।।३९-४०

गुरु ही पिता हैं, माता हैं और भगवान् महेश्वर हैं। देवता के रुष्ट होने पर **गुरु** रक्षा करते हैं, किन्तु **गुरु-देव** के रुष्ट होने पर कोई रक्षक नहीं होता। जन्म-दाता पिता और **ब्रह्म-ज्ञान-दाता गुरु** में से गुरु ही श्रेष्ठ हैं। अत: सदा **गुरु-देव** को पिता से भी अधिक पूज्य माना जाता है।।४१-४२

गुरु को यदि शिष्य मनुष्य समझता है, तो उसे सौ करोड़ जन्मों में भी सिद्धि नहीं मिलती। अत: हे देवेशि! ज्ञानी शिष्य **गुरु-देव** को सदा निश्चित रूप से **शिव-स्वरूप** और **गुरु-पत्नी** को **महेश्वरी** समझता है और सभी सिद्धियाँ प्राप्त करता है। **श्रीनाथ** अर्थात् **गुरु** को **शिव-रूप** और **गुरु-पत्नी** को **महेश्वरी-रूप** ही सदा समझना चाहिए। ऐसा न करनेवाला नरक में जाता है।।४३-४५

मन्त्र और **गुरु-देव** में जो कोई भेद नहीं करता, उस पर **भगवती पार्वती** बड़ी प्रसन्न होती हैं और उसे सब कुछ प्रदान करती हैं। **गुरु-देव** की सेवा करता हुआ जो मरता है, वह सब पापों से छूटकर **शिव-लोक** में जाता है।।४६-४७

हे देवेशि! अज्ञान के कारण इस संसार में पापी लोगों की बुद्धि भ्रम में पड़ जाती है और उन्हें कोई सिद्धि नहीं मिलती। अज्ञानी लोगों को **गुरु-देव** की बातों पर विश्वास नहीं हो पाता। ऐसी दशा में हे कल्याणि! उन्हें मेरे वचनों और मन्त्रादि पर भी विश्वास नहीं होता।।४८-४९

विद्वत्ता और कवित्व-शक्ति आदि के अहङ्कार में लोक-लाज में पड़कर लोग जगदीश्वर-स्वरूप **श्रीनाथ गुरु-देव** पर विश्वास नहीं करते। कभी-कभी हे देवि! पाखण्डी-वेश-धारी साधकों के चक्कर में पड़कर, कभी मोह-वश, तो कभी वंश-दोष के कारण लोगों को **सनातन गुरु-देव** पर विश्वास नहीं होता है।।५०-५१

गुरु-देव की सेवा किए बिना जो भक्त '**कुल**'-**धर्म** का पालन करते हैं, उनसे मन्त्र और देवता कभी प्रसन्न नहीं होते। अत: वाणी से, मन से और शारीरिक कार्यों से सदा **गुरु-देव** के हित में लगे रहना चाहिए। जो **गुरु-देव** का अहित करता है, वह विष्ठा (मल) में कीड़े का जन्म पाता है।।५२-५३

शारीरिक कार्यों से **गुरु-देव** की सेवा आदि, वाणी से स्तुति-प्रार्थना आदि और मन से उनकी कुशल-चिन्ता प्रतिदिन करनी चाहिए। **गुरु-देव** की बातों को मन्त्र के समान नित्य मानना चाहिए और **गुरु-देव** के सामने मूर्ति के समान शान्त और अनुशासित भाव से सदैव खड़े रहना चाहिए।।५४-५५

'भले ही जातिवाले अलग रहें, अपने लोग भले ही निन्दा करें, सभी भाई-बन्धु भले ही क्रुद्ध हों, अपना शरीर भले नष्ट हो जाय, किन्तु किसी भी दशा में **गुरु-देव** की दुर्लभ सेवा को नहीं छोड़ना है'—ज्ञान-ध्यान में लगी हुई ऐसी चेतना—बुद्धि जिसकी होती है, उसे महा-माया सन्तुष्ट होकर चारों वर्ग अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्रदान करती हैं।।५६-५८

सद्-गुरु-देव के शिष्य बहुत होते हैं, किन्तु हे सुव्रते! उनमें से किसी-किसी में ही **निर्मला सद्-भक्ति** का उदय होता है।।५९

जिस शिष्य के हृदय में **महेश्वर-स्वरूप गुरु-देव** के प्रति भक्ति नहीं उत्पन्न होती, उसके धन, बल, कुल और कर्म को धिक्कार है।।६०

यदि **गुरु-देव** में भक्ति है, तो पत्नी, पुत्र-पौत्रों, पिता-माता, अपने भाई-बन्धुओं के साथ **गुरु की सेवा, गुरु के ध्यान, गुरु के स्तवन, गुरु के जप, गुरु की पूजा, गुरु की तृप्ति** में सदा तत्पर रहना चाहिए।।६१-६२

एक ही गाँव (या नगर) में स्थित शिष्य को तीनों सन्ध्या-काल में **गुरु-देव** को प्रणाम करना चाहिए। एक कोस (दो मील) की दूरी

पर रहता हो, तो उसे प्रति-दिन एक बार जाकर **गुरु-देव को प्रणाम** करना चाहिए। एक योजन (चार कोस—आठ मील) की दूरी पर रहता हो, तो उसे वर्ष में तीन बार या असमर्थ हो, तो एक बार जाकर **गुरु-देव को प्रणाम** करना चाहिए। स्वयं न जा सके, तो अपने किसी आत्मीय व्यक्ति को भेजकर **गुरु-देव** के प्रति अपना प्रणाम निवेदित करना चाहिए।।६३-६४

अपने विनम्र भाई या पुत्र या पिता को **गुरु-देव** को सन्तुष्ट करने के कार्य में लगाना चाहिए।।६५

यदि शिष्य एक ही गाँव (या नगर) अथवा एक ही घर में रहता हो, तो उसे **गुरु-देव** की पूजा के सिवा अन्य देवता की पूजा नहीं करनी चाहिए। **गुरु-देव** की आज्ञा होने पर इष्ट-देवता की पूजा वह कर सकता है, किन्तु उसके पहले उसे **गुरु-देव** के चरण-कमलों में तीन बार पुष्पाञ्जलि अर्पित करनी चाहिए।।६६-६७

गुरु की पूजा करने से ही **इष्ट-देवता की पूजा** हो जाती है। **गुरु का तर्पण** करने से ही **इष्ट-देवता की तुष्टि** हो जाती है। **गुरु के प्रति भक्ति** करने से ही **इष्ट-देवता की भक्ति** सम्पन्न हो जाती है और **गुरु-देव की वन्दना** करने से ही **इष्ट-देवता की स्तुति** हो जाती है।।६८

विविध प्रकार के गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, माला, आभूषण और वस्त्रों से नित्य **गुरु-देव की पूजा** करनी चाहिए। इसी प्रकार यान, ग्राम, वाहन, पर्यङ्क, दिव्य भोजन, दिव्य चतुर्विध भक्ष्य द्रव्य, छत्र, पीठ, आसन आदि अपने को अच्छी लगनेवाली वस्तुओं और **गुरु-देव** को प्रिय वस्तुओं द्वारा **गुरु-पूजा** करनी चाहिए।।६९-७१

जो शिष्य **ब्रह्म-स्वरूप गुरु-देव-रूपा चण्डी देवी** की समुचित रूप से पूजा करता है, उसके प्रति मैं शिव सदा सन्तुष्ट रहता हूँ, इसमें सन्देह नहीं। हे देवि! मेरे सन्तोष से तुम्हारी भी उस शिष्य पर प्रीति होती है और तुम्हारे सन्तुष्ट होते ही वह मनुष्य जीवन्मुक्त हो जाता है।।७२-७३

जिस शिष्य से **गुरु-देव** प्रसन्न नहीं होते, उसके स्नान, दान, तप, होम और देव-पूजा का क्या फल है अर्थात् सब व्यर्थ ही होते हैं।।७४

हे महा-देवि! मैंने **पुरश्चरण** की बहुत-सी विधियाँ बताई हैं। पाँच अङ्ग (१ जप, २ होम, ३ तर्पण, ४ अभिषेक और ५ ब्राह्मण-भोजन) वाली **पुरश्चर्या** निश्चय ही अभीष्ट फल-दायिनी है। इस **पुरश्चर्या** के उपयुक्त स्थान हैं—१ **विल्व-वृक्ष के नीचे की भूमि, २ श्मशान-भूमि, ३ शून्य घर, ४ देव-मन्दिर, ५ नदी का तट, ६ पर्वत, ७ पर्वत की गुफा, ८ एक-लिङ्ग** (जिस शिव-लिङ्ग के चार कोस की दूरी तक अन्य शिव-लिङ्ग न हो, उसे एक-लिङ्ग कहते हैं) **का स्थान, ९ सुन्दर वन, १० कण्ठ तक गहरा जल।** इन सबसे अधिक **गुरु-देव** के निवास-स्थान की महिमा मानी गई है।।७५-७७

गुरु-देव के निवास-स्थान पर बैठकर हे देवि! जो भगवती का स्मरण या पूजन करता है, उसका फल कोटि-गुना अधिक होता है और शीघ्र ही सिद्धि प्राप्त होती है। **गुरु-देव** के घर में स्थित शिष्य यदि एक बार भी मन्त्र का जप करता है, तो **'सिद्ध-पीठ'** होने से उसका फल उसे तुरन्त प्राप्त होता है।।७८-७९

हे पार्वति! **गुरु-देव** के नाम का उच्चारण (जप-काल को छोड़कर) कभी न करना चाहिए। तर्पण आदि में **गुरु-नाम** के पूर्व **'श्री'** और अन्त में **'आनन्द-नाथ'** जोड़ लेना चाहिए।।८०

हे कल्याणि! **गुरु-देव** के स्थान के नाम के पूर्व भी **'श्री'** लगाकर उसका उच्चारण करना चाहिए। उस स्थान को सदा कैलास के समान समझ कर उसका ध्यान करना चाहिए।।८१

वाराणसी, प्रयाग आदि तीर्थों में जाने से जो पुण्य मिलता है, उससे कोटि गुना अधिक पुण्य **गुरु-स्थान का दर्शन** करने से मिलता है।।८२

गुरु-देव के स्थान को देखकर बुद्धिमान् शिष्य को उसे **'सिद्ध-पीठ'** समझते हुए दण्ड-वत् प्रणाम करना चाहिए। तभी उसे अभीट सिद्धि की प्राप्ति होगी।।८३

गुरु-देव का स्थान कैलास है, उनका घर चिन्तामणि-गृह है, उनके स्थान के वृक्ष-समूह कल्प-वृक्ष हैं—सदा हृदय में ऐसी ही

भावना रखनी चाहिए। **गुरु-देव** के घर की लता कल्प-लता है, जल-धार अमृत के समान है और पुष्प मणि-पुष्प हैं—सदा ऐसा ही चिंतन करना चाहिए।।८४-८५

गुरु-देव के घर की सेविकाएँ भैरवी कही गई हैं। बुद्धिमानों को **गुरु-गृह के सेवकों** को सदा भैरव-रूप समझना चाहिए।।८६

गुरु-देव के समीप शिष्य को सदा भय, क्रोध, आलस्य, परिहास (हँसी-दिल्लगी), प्रलाप (तर्क-वितर्क) और द्रोह (वाद-विवाद) से दूर रहना चाहिए।।८७

गुरु-गृह में रहते समय शिष्य को सदा अनन्य भाव से सेवक के समान व्यवहार करना चाहिए, जिससे **गुरु-देव** प्रसन्न हों।।८८

भले ही प्राण चले जाएँ या सिर ही क्यों न कट जाय, किन्तु **गुरु** की बात की अवहेलना कभी न हो, ऐसा भाव रखना चाहिए।।८९

गुरु-देव को देखकर अपने चित्त में देवता का ध्यान करे और अष्टाङ्ग-रूप से भूमि पर लेटकर उन्हें नमस्कार करे।।९०

दोनों हाथों से, सिर से, दोनों पैरों से, दोनों कानों और नासिका से साधक को नित्य **गुरु-देवों को प्रणाम** करना चाहिए।।९१

गुरु-देव को प्रणाम कर शिष्य प्रतिमा के समान स्थिर रहे। फिर **गुरु की आज्ञा** पाकर उसे उनके पैरों के पास बैठना चाहिए।।९२

गुरु-देव के बैठे रहने पर शिष्य स्वयं भी बैठे। **गुरु-देव** के चलने पर उनके पीछे-पीछे चले और जब वे बात करें, तो चुपचाप रहकर उनकी बात सुननी चाहिए।।९३

गुरु-देव यदि किसी अन्य व्यक्ति से कोई कार्य करने को कहें, तो शिष्य को आगे बढ़कर स्वयं उस कार्य को सेवक-वत् कर देना चाहिए। **गुरु-देव की शक्ति, गुरु-देव के पीठ (आसन), गुरु-देव के भोजन, गुरु-देव के वस्त्र** और **अलङ्कार** को शिष्य कभी अपने प्रयोग में न लाए।।९४

गुरु-गृह में रहते हुए शिष्य जो-जो पुण्य कार्य करता है, उस सबका उसे सैकड़ों पुण्य तीर्थों से अधिक अक्षय फल मिलता है।।९५

जो बुद्धिमान् अपने मस्तक पर **गुरु-चरणोदक** को धारण करता है, वह सौ कोटि तीर्थों के फल से भी दस गुना अधिक पुण्य प्राप्त करता है। जो बुद्धिमान् तीनों सन्ध्याओं में **गुरु-चरणोदक** का पान करता है, उसका इस मोह-मय संसार में पुनर्जन्म नहीं होता है।।९६-९७

एक ही ग्राम में रहता हो या किसी अन्य ग्राम में, शिष्य को तीनों सन्ध्याओं में गुरु-पादार्चन का जल पीना चाहिए। इससे अकाल मृत्यु नहीं होती, रोग-व्याधियों का नाश होता है और सुख तथा मोक्ष की प्राप्ति होती है।।९८-९९

गुरु-देव के चरणोदक को देखकर उसकी प्रदक्षिणा कर, उसे प्रणाम कर अपने शिर पर छिड़कना चाहिए। तब उसका पान करना चाहिए।।१००

श्री गुरु-देव के चरण-कमलों से अर्चित पवित्र जल में **ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र** और सभी **पितृ-देवताओं** का वास रहता है। ऐसे **गुरु-पादोदक** को जो नित्य पीता है, वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का स्वामी हो जाता है।।१०१-१०२

गुरु-पादार्चित जल को कभी लाँघना नहीं चाहिए। दूसरा कोई उसे लाँघ न जाय, इस डर से उसे जल द्वारा धो देना चाहिए।।१०३

गुरु-देव के आगे या उनके बराबर शिष्य को कभी न चलना चाहिए।।१०४

जो गन्ध-पुष्प से तीनों सन्ध्याओं में **जगद्-गुरु** की पूजा करता है, उसे यन्त्र-पूजादि के विधान और न्यास-जाल की क्या आवश्यकता! अर्थात् उसे उन सबके किए बिना ही सभी साधनाओं का फल **गुरु-पूजा** मात्र से मिल जाता है।।१०५

जितनी बार कार्य-वश **गुरु** के स्थान को जाय, उतनी ही बार बुद्धिमान् शिष्य को **सनातन गुरु-देव** को प्रणाम करना चाहिए और

स्वयं अपनी गूंथी हुई श्वेत पुष्पों की माला और अपने द्वारा घिसे हुए श्वेत चन्दन को **श्रद्धा-पूर्वक** उन्हें निवेदित करना चाहिए। हे देवि! ऐसा करने से उस शिष्य में तुम्हारे प्रति भक्ति उत्पन्न होती है और अन्त में उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है।।१०६-१०८

हे देवि! **गुरु-देव** का अन्न प्रसाद-रूप में जो खाता है, उसके कोटि जन्मों के पाप उसी समय नष्ट हो जाते हैं। **गुरु-देव** का प्रसादान्न जब प्राप्त हो, तब स्नान करने, पैर धोने या आचमन करने या स्थान का विचार करने की आवश्यकता नहीं, उसके मिलते ही उसे खा लेना चाहिए। प्रसाद खाते समय 'मैं ब्राह्मण हूँ, सन्ध्या-वन्दनादि नहीं किया है', 'मैं कुलीन हूँ, स्नानादि नहीं किया है', 'मैं ऊँची जाति का हूँ, खड़े-खड़े कैसे खाऊँ', 'जाति के लोग, पुत्र और भाई बन्धु प्रसाद खाते देख क्या कहेंगे'—इस प्रकार के भाव मन में न लाना चाहिए अर्थात् जिस अवस्था में भी हो, **गुरु-देव** का प्रसाद मिलते ही उसे खा लेना चाहिए। हे देवि! यदि **गुरु-देव** का प्रसादान्न (भोजन से बचा हुआ उच्छिष्ट अन्न) एक स्थान पर हो और स-तीर्थ लोग उसके लिए घेर कर खड़े हों, तब भी उस मोक्ष-दायक अन्न को खा लेना चाहिए, शूद्र का छुआ हुआ है, इसका विचार न करे।।१०९-११२

हे देवेशि! गुरु के प्रसादान्न को जो अमृत समझ कर खाता है, उससे मैं शिव प्रसन्न होता हूँ, इसमें सन्देह नहीं। हे परमेश्वरि! यदि इस विषय में किसी को कुछ भ्रम हो, तो सौ कोटि कल्पों में भी उसका उद्धार नहीं होता। हे देवि! **गुरु-देव** के जूठे अन्न को खाकर उसे सारे शरीर में लगाना चाहिए। इससे वज्र भी उसके शरीर को कभी चोट नहीं पहुँचा सकता। हे देवि! **गुरु-देव** का उच्छिष्ट अन्न भोग और मोक्ष-दायक होता है। अत: **कौलिक शिष्यों** को इसे प्रतिदिन अवश्य खाना चाहिये।।११३-११६

हे देवि! **गुरु-देव** का उच्छिष्ट तुम्हारा ही उच्छिष्ट होने से कल्याणकारी होता है। हे महा-देवि! तुम्हारा उच्छिष्ट ब्रह्मादि देवों के लिए भी दुर्लभ है। इसी से इन्द्रादि देवों द्वारा नित्य ही प्रार्थना की जाती है। **गुरु-देव** के उच्छिष्ट को जो भक्ति-पूर्वक खाता है, उसे जगद्धात्री अन्नपूर्णा ऐश्वर्य प्रदान करती हैं।।११७-११९

हे प्रिये! जो मोह-वश **गुरु-देव** के उच्छिष्ट को नहीं खाता, उससे तुम रुष्ट हो जाती हो और पग-पग में उस पर विपत्ति आती है। अत: यदि भाग्य से **गुरु-देव** का उच्छिष्ट मिल जाय, तो प्रणाम कर उसे मस्तक से लगाकर ग्रहण करे, शुद्ध-अशुद्ध का विचार न करे।।१२०-१२१

यह परम अद्‌भुत रहस्य-मय महद् '**गुरु-तन्त्र**' तुमसे कहा है। इसे पशु-भाव वाले लोगों के सामने नहीं प्रकट करना चाहिए क्योंकि अज्ञानी लोग इसे समझ नहीं सकेंगे और उल्टा अर्थ लगाकर हानि उठा बैठेंगे।।१२२

इस **महत् तन्त्र** को गुप्त ही रखना चाहिए। हे वरारोहे! अब जो-जो बातें कहता हूँ, वे सब सार तत्त्व हैं। उन्हें सुनो, क्योंकि इन्हें मानने से शीघ्र ही सिद्धि मिलती है।।१२३

लोगों की कल्याण-कामना से **गुरु-सेवा** की विधि बताऊँगा, जिसका पालन करने से **पुरश्चरण का फल** मिलता है। श्री **गुरु-देव** की सेवा ही एक प्रकार की पुरश्चर्या है। जो पञ्चाङ्ग पुरश्चरण नहीं कर पाता, उसे **गुरु-देव की सेवा** करनी चाहिए।।१२४-१२५

गुरु-सेवा-रूपी पुरश्चरण करने के लिए **गुरु-देव** के निवास-स्थान के लिए जाने के पहले **गुरु को प्रणाम** करे, तब यात्रा के लिए अपने घर से बाहर निकले। फिर जैसा पहले बता आए हैं, उसी प्रकार प्रति-दिन **गुरु-देव की सेवा** करे।।१२६

रात्रि के समाप्त होने पर उठकर पूर्वोक्त विधि के अनुसार **गुरु-देव का ध्यान** करे। फिर धीरे-धीरे चलकर **श्रीगुरु-देव** के पास पहुँचे और उनके चरणों में साष्टाङ्ग प्रणाम कर तीन बार **गुरु-शैय्या की प्रदक्षिणा** करे। तब **शिव-स्वरूप** उन **गुरु-देव** को पंखे से हवा करे। इसके बाद द्वार के पास जाकर हाथ जोड़कर खड़ा रहे।।१२७-१२८

गुरु-देव के निद्रा त्याग करते ही शिष्य उनके **श्री-मुख का दर्शन** करे और सेवक के समान उनकी आज्ञा का पालन करने को प्रस्तुत हो जाए। इस प्रकार प्रातः-काल से ही वह उत्तम शिष्य **गुरु-देव** के पीछे सेवक की तरह लग जाए। अपने स्नान, पूजा, तर्पण आदि का विचार छोड़कर **गुरु-देव** की ही सेवा में बराबर लगा रहे, उत्तम शिष्य का कर्त्तव्य है कि अन्य सेवकों को हटाकर स्वयं ही **गुरु-देव** की सारी सेवा करे। **गुरु-देव** के प्रति प्रेम-मय होकर उसे यह सेवा करनी चाहिए।।१२९-१३१

गुरु-देव को स्नान कराकर उनके पादोदक को अपने सिर पर देकर स्वयं भी स्नान करे। तब उनकी पूजा क़र उनके चरणोदक का पान करे। फिर **गुरु-देव** के भोजन कर चुकने पर उनके उच्छिष्ट अन्न को खाए। **गुरु-देव** को ताम्बूल (पान) देकर उनके लेटने के लिए शय्या अच्छी तरह बिछाए और जब वे शयन करें, तब उनके पैरों को दबाकर उनकी सेवा करे। **गुरु-देव** की आज्ञा लेकर स्वयं भी सोए। इस प्रकार शिष्य को प्रति-दिन **गुरु-देव** की सेवा करनी चाहिए।।१३२-१३५

उक्त प्रकार एक वर्ष तक जो शिष्य **गुरु-देव की नित्य सेवा** करता है, वह मन्त्र-सिद्ध होकर महा-सिद्धीश्वर बन जाता है। यह सेवा एकाग्र होकर प्रति-दिन करनी चाहिए। चञ्चल मन से जो सेवा की जाती है, वह निष्फल होती है। सेवकों को हटा कर **गुरु-देव की सेवा** स्वयं ही करनी चाहिए और रात्रि में **गुरु-देव** के चरणों के पास बैठकर **मन्त्र का जप** करना चाहिए। वर्ष के पूरा होने पर **गुरु-देव** को सन्तुष्ट मन से **कृपाकांक्षी शिष्य** को यह श्रेष्ठ आशीर्वाद देना चाहिए कि—**'सिद्ध-मन्त्रो भवेस्त्वं हि गच्छ शीघ्रं निजालयम्।'** अर्थात् 'तुम्हें मन्त्र सिद्ध होगा। अब शीघ्र ही तुम अपने घर जाओ।'।।१३६-१३९

हे देवि! **गुरु-देव** के उक्त प्रकार आशीर्वाद देने पर शिष्य भी उन्हें अपनी सामर्थ्य के अनुसार दक्षिणा या सर्वस्व निवेदन करे। दक्षिणा देने का नियम यह है कि सम्भव हो, तो सर्वस्व दे, अन्यथा उसका आधा या आधे का आधा दे, अथवा अपनी आय का आधा समर्पित करे या अपने कुटुम्बियों का पालन-पोषण करने के बाद जो बचता हो, वही प्रत्यक्ष **शिव-स्वरूप गुरु-देव** को प्रदान करे। साथ ही **गुरु-देव** की पत्नी, उनके पुत्र, भाइयों और बन्धु-वर्ग को वस्त्रादि विविध वस्तुएँ देकर सन्तुष्ट करे। इससे शिष्य सिद्धियों का स्वामी होता है।।१४०-१४३

मुझे प्रिय यह **'गुरु-तन्त्र'** जो तुमसे कहा गया है, इसे सदा यत्न-पूर्वक गुप्त रखना चाहिए और **गुरु-देव** के स्थान पर इसका पाठ करना चाहिए। शिव-मन्दिर में, नदी-तट पर, बिल्व-वृक्ष के मूल-भाग में इस तन्त्र को प्रातः, मध्याह्न और सायं तीनों काल पढ़ना और पढ़वाना चाहिए।।१४४-१४५

मेरे द्वारा कथित यह कल्प कभी प्रकट नहीं करना चाहिए। नास्तिक और भक्ति-हीन व्यक्ति को इसे कभी नहीं देना चाहिए। हे महा-देवि! मलिन बुद्धि और **गुरु-भक्ति** से रहित तथा क्रोध, लोभादि से ग्रस्त, नष्ट-आचार-विचारवाले व्यक्ति को इसे न बताना चाहिए।।१४६-१४७

निन्दा न करनेवाले और पवित्र मनवाले व्यक्ति को यह तन्त्रराज दिखाना चाहिए। तुम्हें प्रिय यह तन्त्र जिसके घर में रहता है, उसे आग लगने का या चोरी होने का डर नहीं रहता। महा-मारी और शत्रु का भी भय उसे नहीं होता।।१४८-१४९

दीक्षा लेकर **गुरु-देव** के स्थान में इसका नित्य अभ्यास करना चाहिए। पुरश्चरण-काल में भी एकान्त स्थान में इसका पाठ करना चाहिए।।१५०

मैंने इस अनुपम यशवाले, पवित्र तन्त्र-राज को बताया है। जो भाग्यशाली **भगवान् शङ्कर, भगवती पार्वती** और **गुरु-देव** के चरणों का ध्यान कर इसे सदा पढ़ता रहता है, उसे निश्चय ही **धरा-भक्ति** सहज ही प्राप्त हो जाती है और राजा उसके वश में हो जाते हैं तथा वह स्वयं सदा ऐश्वर्यवान् रहता है।

***

साधन-माला

['चण्डी' वर्ष ५२ (अङ्क २) में प्रकाशित बहु-उपयोगी कल्याण-प्रद प्रयोग]

[१२]

श्रीकार्तवीर्यार्जुन-मन्त्र-प्रयोग

माहात्म्य—आज के धन-प्रधान युग में यदि किसी व्यक्ति का परिश्रम से कमाया हुआ धन अथवा जमीन, मकान आदि सम्पत्ति किसी जगह फँस जाए तथा उसकी पुनः प्राप्ति की सम्भावना भी दिखाई न पड़े, तो **श्रीकार्तवीर्यार्जुन का प्रयोग** अचूक तथा सद्यः फल-दायी होता है। **श्रीकार्तवीर्यार्जुन का प्रयोग** अभीष्ट-फल को देनेवाला तथा सद्यः सफल होनेवाला है। इस **'प्रयोग'** से साधक **गत-नष्ट धन** को तो प्राप्त कर ही सकता है, साथ ही **षट्-कर्म-साधन**—यहाँ तक कि **प्रत्येक अभिलषित-प्राप्ति** में भी सफल हो सकता है।

आवश्यक निर्देश—(१) प्रयोग की सफलता एवं निर्विघ्नता हेतु सर्व-प्रथम **भू-शुद्धि, आसन-शुद्धि, भूत-शुद्धि, भूतोपसंहार, स्व-प्राण-प्रतिष्ठा** आदि आवश्यक कर्म कर **विघ्न-विनाशक गणेश** का **पूजन** एवं **'कलश-स्थापन'** करे। स्वयं न कर सके, तो विद्वान् ब्राह्मण का सहयोग प्राप्त करे।

(२) विधि-वत् स्थापित **'कलश'** के सम्मुख कामना-भेद के अनुसार निश्चित संख्या में **श्रीकार्तवीर्यार्जुन-मन्त्र** का **'जप'** करे। जप पूरा होने पर दशांश **'हवन'**, हवन का दशांश **'तर्पण'**, तर्पण का दशांश **'मार्जन'** एवं मार्जन का दशांश **ब्राह्मण-भोजन** कराए।

(३) **'प्रयोग' की सफलता** के लिए **'प्रयोग'** करने से पूर्व **दस सहस्र 'गायत्री-जप'** कर ले, तो अति उत्तम।

(४) **'श्रीकार्तवीर्यार्जुन-मन्त्र'** के **'जप'** की पूर्ण-संख्या को इस प्रकार बाँटें कि वह सम-संख्या के आधार पर प्रति-दिन किया जा सके। किसी दिन कम और किसी दिन अधिक **'जप'** नहीं किया जाना चाहिए।

(५) प्रति-दिन जितनी देर **'जप'** चले, उतने समय तक **'अखण्ड दीपक'** अवश्य ही जलता रहना चाहिए।

(६) जब तक **'प्रयोग'** चले, तब तक शास्त्रोक्त नियमों का पालन करे। जैसे—**शुद्ध आचार-विचार, आहार, मित-भाषण, दुर्व्यसन-त्याग, भूमि-शयन, ब्रह्मचर्य** आदि।

(७) '**प्रयोग**' करने से पूर्व '**मन्त्र**' को '**पर्व**'-काल (नवरात्र, जन्माष्टमी, दीपावली, होली आदि), '**ग्रहण**' आदि में '**जप**' कर सिद्ध कर लेना चाहिए।

साधना-क्रम—

(१) पहले शुद्ध होकर, '**सङ्कल्प**' करे—

ॐ विष्णुः विष्णुः विष्णुः तत्-सदद्य ब्रह्मणोऽह्नि, द्वितीय-प्रहरार्द्धे, श्रीश्वेत-वाराह-कल्पे जम्बु-द्वीपे, भरत-खण्डे, आर्यावर्तैक-देशान्तर्गते, पुण्य-क्षेत्रे, कलि-युगे, कलि-प्रथम-चरणे, अमुक-नाम-सम्वत्सरे, अमुक-मासे, अमुक-पक्षे, अमुक-तिथौ, अमुक-वासरे, अमुक-गोत्रोत्पन्नो, अमुक-नाम-शर्मा, अमुक-कामना-सिद्ध्यर्थं मम श्रीकार्तवीर्यार्जुन-देवता-प्रीति-पुरस्सरं क्षिप्रममुक-जनस्य बुद्धि-हरण-पूर्वकं स्व-धन-प्राप्तये मनोऽभिलषित-कार्य-सिद्धये वा दीप-दान-पूर्वकं अमुकामुक-संख्यात्मकं जप-रूप-प्रयोगमहं करिष्यामि।

(२) उक्त प्रकार से '**सङ्कल्प**' करने के बाद '**श्रीगणेशादि-पूजन**' करे।

(३) फिर, **गोबर से लेपन** कर **शुद्ध स्थान** (पक्का फर्श हो, तो धोकर '**पञ्च-गव्य**' से प्रोक्षण करे) पर **ताँबे का बर्तन** रखे तथा उसमें **लाल चन्दन** अथवा **रोली** से **षट्-कोण** बनाकर, उसके बीच में '**ॐ फ्रों**' लिखे। फिर उसमें एक **ताँबे का दीप-पात्र** (सरसों के तेल, मौली या लाल रङ्ग से रँगी रुई की बत्ती सहित) निम्न मन्त्र पढ़ते हुए स्थापित करे—

शुद्ध-तैल - दीपमयं, स्थापयामि जगत्पते!
कार्तवीर्य, महा-वीर्य! कार्यं सिद्ध्यतु मे हि तत्॥

(४) '**दीप**'-**पात्र** के दाहिने भाग में (अर्थात् साधक के बाँईं ओर) एक **नई छुरी**—निम्न '**मन्त्र**' पढ़कर स्थापित करे। **छुरी की धार**—'**दक्षिण**'- **दिशा की ओर रहे** और उसकी **नोंक** (**अग्र-भाग**)—**साधक की ओर रहे**—'**ॐ नमः सुदर्शनास्त्राय फट्।**'

(५) '**दीपक**' **का मुख** पश्चिम की ओर या साधक की ओर रखे। निम्न मन्त्र से उसे जलाए—

ॐ कार्तवीर्य नृपाधीश! योग-ज्वलित-विग्रह!
भव सन्निहितो देव! ज्वाला-रूपेण दीपके॥

(६) मन्त्रोच्चार-पूर्वक '**दीपक**' की ज्योति में '**प्राण-प्रतिष्ठा**' करे। यथा—पहले '**प्राण-प्रतिष्ठा**'-मन्त्र का '**विनियोग**' पढ़े—**ॐ अस्य श्री प्राण-प्रतिष्ठा-मन्त्रस्य अजेश-पद्मजाः ऋषयः। ऋग्-यजुः-सामानि छन्दांसि। प्राण-शक्तिर्देवता। आं बीजं। ह्रीं शक्तिः। क्रों कीलकं। श्री-कार्तवीर्यार्जुन-देव-दीपे प्राण-प्रतिष्ठापने विनियोगः।**

इसके बाद '**श्रीकार्तवीर्यार्जुन-दीप-देवतायै नमः**' से लाल चन्दन एवं पुष्पादि से '**दीपक की पूजा**' करे। पूजा करने के बाद निम्न मन्त्र पढ़कर '**दीप-समर्पण**' करे—

कार्तवीर्य महा-वीर्य! भक्तानामभयं-कर!
दीपं गृहाण मद्-दत्तं, कल्याणं कुरु सर्वदा॥
अनेन दीप-दानेन, ममाभीष्टं प्रयच्छ च।

फिर '**दीपक**' की सन्निधि में निम्न-लिखित '**प्राण-प्रतिष्ठा-मन्त्र**' का **३ बार जप** करे—

मन्त्र—'**ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं ॐ क्षं सं हंसः ह्रीं ॐ हंसः।**'

(७) फिर, **श्रीकार्तवीर्यार्जुन-मन्त्र की साधना** प्रारम्भ करे। यथा—

विनियोग—**ॐ अस्य श्रीकार्तवीर्यार्जुन-मन्त्रस्य श्रीदत्तात्रेय ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीकार्तवीर्यार्जुनो देवता। फ्रों बीजं। ह्रीं शक्तिः। क्लीं कीलकं। ममाभीष्ट-सिद्धये जपे विनियोगः।**

ऋष्यादि-न्यास—**ॐ श्रीदत्तात्रेय-ऋषये नमः**-शिरसि। **अनुष्टुप्-छन्दसे नमः**-मुखे। **श्रीकार्तवीर्यार्जुन-देवतायै नमः**-हृदये। **फ्रों वीजाय नमः**-गुह्ये। **ह्रीं शक्तये नमः**-पादयोः। **क्लीं कीलकाय नमः**-नाभौ। **ममाभीष्ट-सिद्धये जपे विनियोगाय नमः**-सर्वाङ्गे।

कर-न्यास—**ॐ आं फ्रों ब्रीं** – अंगुष्ठाभ्यां नमः। **ॐ ईं क्लीं भ्रूं** – तर्जनीभ्यां नमः। **ॐ आं ह्रीं** – मध्यमाभ्यां नमः। **ॐ क्रैं क्रों श्रीं** – अनामिकाभ्यां नमः। **ॐ हुं फट्** – कनिष्ठिकाभ्यां नमः। **ॐ कार्तवीर्यार्जुनाय नमः** – कर-तल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादि-न्यास—**ॐ आं फ्रों ब्रीं**—हृदयाय नमः। **ॐ ईं क्लीं भ्रूं**—शिरसे स्वाहा। **ॐ हुं आं ह्रीं**—शिखायै वषट्। **ॐ क्रैं क्रों श्रीं**—कवचाय हुम्। **ॐ हुं फट्**—अस्त्राय फट्। **ॐ कार्तवीर्यार्जुनाय नमः**—सर्वाङ्गे।

टिप्पणी—नेत्रों में '**न्यास**' नहीं होगा अर्थात् **षडङ्ग के स्थान पर पञ्चाङ्ग-न्यास** का ही विधान है।

मन्त्र-न्यास—**ॐ फ्रों ॐ**—हृदये। **ॐ ब्रीं ॐ**—जठरे। **ॐ क्लीं ॐ**—नाभौ। **ॐ भ्रूं ॐ**—लिङ्गे। **ॐ आं ॐ**—गुह्ये। **ॐ ह्रीं ॐ**—दक्ष-चरणे। **ॐ क्रों ॐ**—वाम-चरणे। **ॐ श्रीं ॐ**—ऊर्वोः। **ॐ हुं ॐ**—जानुनोः। **ॐ फट् ॐ**—जङ्घयोः। **ॐ कां ॐ**—मस्तके। **ॐ तं ॐ**—ललाटे। **ॐ वीं ॐ**—भ्रुवोः। **ॐ यां ॐ**—कर्णयोः। **ॐ जुं ॐ**—नेत्रयोः। **ॐ नां ॐ**—नासिकायां। **ॐ यं ॐ**—मुखे। **ॐ नं ॐ**—गले। **ॐ मः ॐ**—स्कन्धयोः।

ध्यान— **उद्यत्-सूर्य-सहस्र-कान्तिरखिल-क्षोणी-धवैर्वन्दितः।**
हस्तानां शत-पञ्चकेन च दधच्चापानिषूंस्तावता॥
कण्ठे हाटक - मालया परिवृतश्चक्रावतारो हरेः।
पायात् स्यन्दनगोऽरुणाभ-वसनाः श्रीकार्तवीर्यो नृपः॥

मूल-मन्त्र—**ॐ फ्रों ब्रीं क्लीं भ्रूं आं ह्रीं क्रों श्रीं हुं फट् कार्तवीर्यार्जुनाय नमः।**

(८) **जप-संख्या एवं हवनादि**—एक लाख। दशांश-क्रम से १०,००० हवन। १,००० तर्पण। १०० मार्जन अथवा अभिषेक। १० ब्राह्मण-भोजन।

(९) **हवन-सामग्री**—चावल, गो-दुग्ध की 'खीर' तथा 'तिल'-मिश्रित 'घृत'।

(१०) **कामना-भेद से हवन-सामग्री**—सरसों-रीठा-लहसुन-कपास—**मारण।** धतूर या गोरोचन-गोबर—**स्तम्भन।** नीम-पत्र—**विद्वेषण।** कमल अथवा कमल-बीज—**आकर्षण।** हल्दी या चम्पा-चमेली—**वशीकरण।** बहेड़ा व खैर-समिधा—**उच्चाटन।** कस्तूरी-गोरोचन—**घर से भागे व्यक्ति की वापसी।** कमल-मक्खन-कस्तूरी—**गत धन की प्राप्ति।** यव (जौ)—**लक्ष्मी-प्राप्ति।** तिल-घी—**पाप-नाश।** तिल-चावल-साँवक (साँवक अर्थात् पीली सरसों)-लाजा—**राज-वशीकरण।** अपामार्ग-आक-दूर्वा—**पाप-नाश व लक्ष्मी-प्राप्ति।** गुग्गुल—**प्रेत-शान्ति।** पीपल-गूलर-पाकड़-बड़-बेल-समिधा—क्रमश: **सन्तान, आयु, धन, सुख, शान्ति।** साँप की काँचुली-धतूरा-पीली सरसों-नमक—**चौर-नाश।** धान—**भूमि-प्राप्ति।**

टिप्पणी—सामान्य रूप से किसी भी काम्य कर्म की सफलता के लिए, जितनी संख्या '**जप**' की होगी, उसका दशांश '**हवन**' होगा, परन्तु जब कार्य-समस्या जटिल हो या सद्य: फल-प्राप्ति की इच्छा हो, तो '**हवन**'-संख्या एक सहस्र से दस सहस्र तक।

(११) **कामना-भेद से जप-संख्या**—बन्दी-मोक्ष—**बारह हजार।** वाद-विवाद (मुकदमे में) जय—**पन्द्रह हजार।** दबे या नष्ट धन की पुन: प्राप्ति—**तेरह हजार।** वाणी-स्तम्भन—**दस हजार।** राज-वशीकरण—**दस हजार।** शत्रु-पराजय—**दस हजार।** नपुंसकता-नाश/ पुन: पुरुषत्व-प्राप्ति—**सत्रह हजार।** भूत-प्रेत-बाधा-नाश—**सैंतीस हजार।** सर्व-सिद्धि-प्राप्ति हेतु—**इक्यावन हजार।** सम्पूर्ण साफल्य हेतु—**सवा लाख।** अन्य कोई समस्या हो, तो स्वयं ही संख्या निर्धारित कर ले अथवा योग्य विद्वान् से मार्ग-दर्शन प्राप्त करे।

उदाहरण (१)—घर से भागे व्यक्ति को वापस बुलाना है, तो '**सर्व-सिद्धि**'—**संख्यक जप**—५१,००० होगा, परन्तु यदि वह व्यक्ति कहीं किसी बन्धन में पड़ा होगा, तो कैसे लौटेगा? अत: '**बन्दी-मोक्ष**'—संख्यक जप—१२,००० इसमें जोड़ ले। 'खैर' की समिधा हो और कस्तूरी, गोरोचन तथा कमल-बीज-मिश्रित (चावल-गो-दुग्ध की खीर तिल-सहित) घी से दस हजार हवन करना चाहिए।

उदाहरण (२)—किसी व्यापारी का ट्रक सामान-सहित लेकर चालक भाग जाए, तो नष्ट-द्रव्य-प्राप्ति हेतु १३,००० के अतिरिक्त चालक के नाम के वर्णाक्षर तथा ट्रक के वर्ण/ संख्या के अनुसार अतिरिक्त संख्या में जप करे। साँप की काँचुली-धतूरा-पीली सरसों-नमक तथा चावल-खीर-तिल-घी से अपामार्ग-आक-दूर्वा समिधा में पाँच से दस हजार तक का हवन होना चाहिए।

'**कलौ चतुर्गुणं प्रोक्तं**' के अनुसार यदि शक्ति हो, तो निर्दिष्ट संख्या का चार गुना '**जप**' करना चाहिए। प्रत्येक प्रयोग में '**दीप-दान**' परमावश्यक है।

'**हवन**' के पश्चात् '**तर्पण**' करना होता है। वैसे तो '**तर्पण**'—हवन का दशांश होता है, परन्तु कार्य की आवश्यकता के अनुसार '**हवन**' के अनुसार ही '**तर्पण**' भी एक हजार से दस हजार तक किया जा सकता है। कामना-भेद से '**तर्पणीय जल**' में '**हवन**'-सम्बन्धी सामग्री को आंशिक रूप में मिश्रित कर सकते हैं।

(१२) **'तर्पण'** एवं **'अभिषेक'**—ताम्र-पात्र में **'फ्रों'** बीज लिखे। उसी पात्र में निम्न मन्त्र से 'तर्पण' करे—**ॐ फ्रों ब्रीं क्लीं भ्रूं आं ह्रीं क्रों श्रीं हुं फट् कार्तवीर्यार्जुनं तर्पयामि नमः।**

'अभिषेक' के सम्बन्ध में दो मत हैं—(१) **देवता का मार्जन**, (२) **यजमान का मार्जन।** दोनों के मन्त्र निम्न प्रकार हैं—

१. ॐ फ्रों ब्रीं क्लीं भ्रूं आं ह्रीं क्रों श्रीं हुं फट् कार्तवीर्यार्जुनं अभिषिञ्चामि।

२. ॐ फ्रों ब्रीं क्लीं भ्रूं आं ह्रीं क्रों श्रीं हुं फट् कार्तवीर्यार्जुनं आत्मानं अमुकं वा अभिषिञ्चामि।

(१३) **'आसन'** एवं **'माला'**—**श्रीकार्तवीर्यार्जुन-मन्त्र** के जपानुष्ठान में **आसन** आदि **लाल रङ्ग** के होते हैं। **शङ्ख की माला** सर्वोत्तम, **रक्त-चन्दन** की मध्यम तथा अन्य मालाएँ भी ठीक मानी गई हैं।

(१४) **गायत्री**—कुछ विद्वानों का मत है जिस देवता के मन्त्र का जप किया जाए, उसी देवता की **'गायत्री'** का **दस सहस्र** जप होना चाहिए। अतः यहाँ **'श्रीकार्तवीर्यार्जुन गायत्री'** भी दी जा रही है। इच्छुक बन्धु इसका **'जप'** भी कर सकते हैं—**ॐ कार्तवीर्याय विद्महे महा-वीर्याय धीमहि तन्नोऽर्जुनः प्रचोदयात्।**

—पं० ऋषिकुमार चक्रपाणि

***

[१३]

नेत्र-रोग-नाशक 'बत्तीसा-यन्त्र'

१. प्रति-दिन प्रातः **हल्दी** को **'गङ्गा'-जल** में घिसकर **अनार की कलम** से **कांस्य-पत्र** में उपर्युक्त **'बत्तीसा यन्त्र'** को लिखे। यथा—

८	१५	२	७
६	३	१२	११
१४	९	८	१
४	५	१०	१३

२. इस प्रकार लिखे गए **'बत्तीसा-यन्त्र'** के मध्य में **घृत से पूर्ण, ताम्र का चार बत्तियोंवाला 'दीपक'** स्थापित करे।

३. **'दीपक'** में **चार बत्तियाँ**, चारों कोनों की ओर जलती हुई स्थापित करे।

४. तब **गन्ध, अक्षत-पुष्प** से **'यन्त्र' का पूजन** करे।

५. फिर **पूर्व** की ओर **मुख** कर बैठे और **'ॐ ह्रीं हंसः'** मन्त्र का **'जप'** करे। **'जप'-संख्या १२००** और **'जप'-माला—हल्दी की** होनी चाहिए।

***

[१४]

सर्वारिष्ट-निवारण स्तोत्र

ॐ गं गणपतये नमः। सर्व-विघ्न-विनाशनाय, सर्वारिष्ट-निवारणाय, सर्व-सौख्य-प्रदाय, बालानां बुद्धि-प्रदाय, नाना-प्रकार-धन-वाहन-भूमि-प्रदाय, मनोवाञ्छित-फल-प्रदाय रक्षां कुरु कुरु स्वाहा॥

ॐ गुरवे नमः, ॐ श्रीकृष्णाय नमः, ॐ बलभद्राय नमः, ॐ श्रीरामाय नमः, ॐ हनुमते नमः, ॐ शिवाय नमः, ॐ जगन्नाथाय नमः, ॐ बदरीनारायणाय नमः, ॐ श्री दुर्गा-देव्यै नमः।

ॐ सूर्याय नमः, ॐ चन्द्राय नमः, ॐ भौमाय नमः, ॐ बुधाय नमः, ॐ गुरवे नमः, ॐ भृगवे नमः, ॐ शनिश्चराय नमः, ॐ राहवे नमः, ॐ केतवे नमः, ॐ नव-ग्रहाः रक्षां कुरु कुरु नमः॥

ॐ मन्ये वरं हरिहरादय एवं दृष्ट्वा द्रष्टेषु येषु हृदयस्थं त्वयं तोषमेति विविक्षते न भवता भुवि येन नान्य कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि। ॐ नमो मणि-भद्रे! जय-विजय-पराजिते! भद्रे! लभ्यं कुरु कुरु स्वाहा॥

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्-सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्॥ सर्व-विघ्नं शान्तं कुरु कुरु स्वाहा॥

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीबटुक - भैरवाय आपदुद्धारणाय महान्-श्याम-स्वरूपाय दीर्घारिष्ट-विनाशाय नाना-प्रकार-भोग-प्रदाय मम (यजमानस्य वा) सर्वारिष्टं हन हन, पच पच, हर हर, कच कच, राज-द्वारे जयं कुरु कुरु, व्यवहारे लाभं वृद्धिं वृद्धिं, रणे शत्रून् विनाशय विनाशय, पूर्णां आयुः कुरु कुरु, स्त्री-प्राप्तिं कुरु कुरु, हुम् फट् स्वाहा॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय नमः। ॐ नमो भगवते, विश्व - मूर्तये, नारायणाय, श्रीपुरुषोत्तमाय। रक्ष रक्ष, युग्मदधिकं प्रत्यक्षं परोक्षं वा अजीर्णं पच-पच, विश्व-मूर्तिकान् हन-हन, ऐकाह्निकं द्वाह्निकं त्र्याह्निकं चतुरह्निकं ज्वरं नाशय-नाशय, चतुरग्नि-वातान् अष्टा-दश-क्षयान् रोगान्, अष्टादश-कुष्ठान् हन-हन, सर्व-दोषं भञ्जय-भञ्जय, तत्-सर्वं नाशय-नाशय, शोषय-शोषय, आकर्षय-आकर्षय, मम शत्रुं मारय-मारय, उच्चाटय-उच्चाटय, विद्वेषय-विद्वेषय, स्तम्भय-स्तम्भय, निवारय-निवारय, विघ्नं हन-हन, दह-दह, पच-पच, मथ-मथ, विध्वंसय-विध्वंसय, विद्रावय-विद्रावय, चक्रं गृहीत्वा शीघ्रमागच्छागच्छ, चक्रेण हन-हन, पर-विद्यां छेदय-छेदय, चौरासी-चेटकान् विस्फोटान् नाशय-नाशय, वात-शुष्क-दृष्टि-सर्प-सिंह-व्याघ्र-द्विपद-चतुष्पद अपरे बाह्यं ताराभिः भव्यन्तरिक्षं अन्यान्य-व्यापि-केचिद् देश-काल-स्थान सर्वान् हन-हन, विद्युन्मेघ-नदी-पर्वत, अष्ट-व्याधि, सर्व-स्थानानि, रात्रि-दिनं, चौरान् वशय-वशय, सर्वोपद्रव-नाशनाय, पर-सैन्यं विदारय-विदारय, पर-चक्रं निवारय-निवारय, दह-दह, रक्षां कुरु-कुरु, ॐ नमो भगवते, ॐ नमो नारायणाय, हुं फट् स्वाहा॥

ठः ठः ॐ ह्रीं ह्रीं। ॐ ह्रीं क्लीं भुवनेश्वर्याः श्रीं ॐ भैरवाय नमः। हरि ॐ उच्छिष्ट-देव्यै नमः। डाकिनी-सुमुखी-देव्यै, महा-पिशाचिनी ॐ ऐं ठः ठः। ॐ चक्रिण्या अहं रक्षां कुरु-कुरु, सर्व-व्याधि-हरणी-देव्यै नमो नमः। सर्व-प्रकार-बाधा-शमनमरिष्ट-निवारणं कुरु-कुरु फट्। श्रीं ॐ कुब्जिका देव्यै ह्रीं ठः स्वाहा॥

शीघ्रमरिष्ट-निवारणं कुरु-कुरु देवी शाम्बरी क्रीं ठः स्वाहा॥

शारिका-भेदा महा-माया पूर्णं आयुः कुरु। हेमवती मूलं रक्षा कुरु। चामुण्डायै दैव्यै शीघ्रं विघ्नं सर्वं वायु-कफ-पित्त-रक्षां कुरु। मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र-कवच-ग्रह-पीडान् तर, पूर्व-जन्म-दोषान् तर, अन्य-जन्म-दोषान् तर, मातृ-दोषान् तर, पितृ-दोषान् तर, मारण-मोहन-उच्चाटन-वशीकरण-स्तम्भन-उन्मूलनं भूत-प्रेत-पिशाच-जात-जादू-टोना-शमनं कुरु। सन्ति सरस्वत्यै कण्ठिका-देव्यै गल-विस्फोटकायै विक्षिप्त-शमनं महान् ज्वर-क्षयं कुरु स्वाहा॥

सर्व-सामग्री-भोगं सप्त-दिवसं देहि-देहि, रक्षां कुरु, क्षण-क्षण अरिष्ट-निवारणं, दिवस-प्रति-दिवस दुःख-हरणं मङ्गल-करणं कार्य-सिद्धिं कुरु-कुरु। हरि ॐ श्रीरामचन्द्राय नमः। हरि ॐ भूर्भुवः स्वः चन्द्र-तारा-नव-ग्रह-शेष-नाग-पृथ्वी-देव्यै आकाशस्य सर्वारिष्ट-निवारणं कुरु-कुरु स्वाहा॥

१. ॐ ऐं ह्रीं श्रीं बटुक-भैरवाय आपदुद्धारणाय सर्व-विघ्न-निवारणाय मम रक्षां कुरु-कुरु स्वाहा॥

२. ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीवासुदेवाय नमः, बटुक-भैरवाय आपदुद्धारणाय मम रक्षां कुरु-कुरु स्वाहा।

३. ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीविष्णु-भगवान् मम अपराध-क्षमां कुरु-कुरु, सर्व-विघ्नं विनाशय, मम कामना पूर्णं कुरु-कुरु स्वाहा॥

४. ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीबटुक-भैरवाय आपदुद्धारणाय सर्व-विघ्न-निवारणाय मम रक्षां कुरु-कुरु स्वाहा॥

५. ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं ॐ श्रीदुर्गा-देवी रुद्राणी-सहिता, रुद्र-देवता काल-भैरव सह, बटुक-भैरवाय, हनुमान सह मकर-ध्वजाय, आपदुद्धारणाय मम सर्व-दोष-क्षमाय कुरु-कुरु सकल विघ्न-विनाशाय मम शुभ-माङ्गलिक-कार्य-सिद्धिं कुरु-कुरु स्वाहा॥

एष विद्या-माहात्म्यं च, पुरा मया प्रोक्तं ध्रुवं। शत-क्रतो तु हन्त्येतान्, सर्वांश्च बलि-दानवाः॥१
य पुमान् पठते नित्यं, एतत् स्तोत्रं नित्यात्मना। तस्य सर्वान् हि सन्ति, यत्र दृष्टि-गतं विषं॥२
अन्य दृष्टि-विषं चैव, न देयं संक्रमे ध्रुवम्। संग्रामे धारयेत्यम्बे, उत्पाता च विसंशयः॥३
सौभाग्यं जायते तस्य, परमं नात्र संशयः। द्रुतं सद्यं जयस्तस्य, विघ्नस्तस्य न जायते॥४
किमत्र बहुनोक्तेन, सर्व-सौभाग्य-सम्पदा। लभते नात्र सन्देहो, नान्यथा वचनं भवेत्॥५
ग्रहीतो यदि वा यत्नं, बालानां विविधैरपि। शीतं समुष्णतां याति, उष्णः शीत-मयो भवेत्॥६
मान्यथा श्रुतये विद्या, पठति कथितं मया। भोज-पत्रे लिखेद् यन्त्रं, गोरोचन-मयेन च॥७

इमां विद्यां शिरो बध्वा, सर्व-रक्षा करोतु मे। पुरुषस्थाथवा नारी, हस्ते बध्वा विचक्षणः॥८
विद्रवन्ति प्रणश्यन्ति, धर्मस्तिष्ठति नित्यशः। सर्व-शत्रुरधो यान्ति, शीघ्रं ते च पलायनम्॥९

'**श्री भृगु-संहिता**' के '**सर्वारिष्ट-निवारण-खण्ड**' में इस अनुभूत स्तोत्र के **४०** पाठ करने की विधि बताई गई है। इस पाठ के फल-स्वरूप पुत्र-हीन को **पुत्र-प्राप्ति** होती है और जिसका विवाह नहीं होता, उसका **विवाह** हो जाता है। इसके अतिरिक्त इस स्तोत्र के पाठ के प्रभाव से सभी प्रकार के दोषों—**ज्वर, क्षय, कुष्ठ, वात-पित्त-कफ की पीड़ाओं और भूतादिक सभी बाधाओं का निवारण होता है।**

इस स्तोत्र का पाठ यदि स्वयं अपने लिए करना हो, तो '**मम**' या '**मम स-कुटुम्बस्य**' शब्द का उच्चारण करे और यदि किसी अन्य (यजमान) के लिए पाठ करना हो, तो स्तोत्र में जहाँ '**यजमान**'—शब्द छपा है, वहाँ उसके नाम, गोत्रादि का उच्चारण करना चाहिए।

किसी भी देवता या देवी की '**प्रतिमा**' या '**यन्त्र**' के सामने बैठकर धूप-दीपादि से उसका पूजन कर इस स्तोत्र का पाठ करना चाहिए। विशेष लाभ की इच्छा हो, तो '**स्वाहा**' और '**नमः**' का उच्चारण करते हुए '**घृत-मिश्रित गुग्गुल**' से आहुतियाँ दे सकते हैं। ऐसा करने से **अभीष्ट कामना की पूर्ति** शीघ्र और अवश्य होती है। इसके पाठ से निर्धन को धन और बेकार को जीविका का साधन—नौकरी, व्यापार आदि की सुविधा प्राप्त होती है। अनुभूत है।

—श्री जे०एल० भरद्वाज, अहमदाबाद (गुजरात)

***

[१५]

त्रैलोक्य-विजय श्रीनृसिंह कवचम्

॥ पूर्व-पीठिका : श्रीनारद उवाच ॥

इन्द्रादि-देव-वृन्देश! ईश्वर, जगत्-पते! महा-विष्णोर्नृसिंहस्य, कवचं ब्रूहि मे प्रभो!
यस्य प्रपठनाद् विद्वांस्त्रैलोक्य-विजयी भवेत्॥१

॥ श्रीप्रजापतिरुवाच ॥

शृणु नारद! वक्ष्यामि, पुत्र-श्रेष्ठ, तपो-धन! कवचं नृसिंहस्य तु, त्रैलोक्य-विजयाभिधम्॥१
यस्य पठनाद् वाग्मी, त्रैलोक्य-विजयी भवेत्। स्रष्टाऽहं जगतां वत्स! पठनाद् धारणाद् यतः॥२
लक्ष्मीर्जगत्-त्रयं पाति, संहर्ता च महेश्वरः। पठनाद् धारणाद् देवाः, बभूवुश्च दिगीश्वराः॥३
ब्रह्म-मन्त्र-मयं वक्ष्ये, भ्रान्त्यादि-विनिकारकं। यस्य प्रसादाद् दुर्वासास्त्रैलोक्य-विजयी भवेत्॥४
पठनाद् धारणाद् यस्य, शास्ता च क्रोध-भैरवः॥५

॥ मूल-पाठ ॥

विनियोग—ॐ अस्य त्रैलोक्य-विजय-नाम श्रीनृसिंह-कवचस्य श्रीप्रजापतिः ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्रीनृसिंहः देवता। क्ष्रौं वीजं। हुं शक्तिः। फट् कीलकं। ममाभीष्ट-सिद्धयर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीप्रजापति-ऋषये नमः शिरसि। गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। श्रीनृसिंह-देवतायै नमः हृदि। क्ष्रौं-वीजाय नमः गुह्ये। हुं-शक्तये नमः नाभौ। फट्-कीलकाय नमः पादयोः। ममाभीष्ट-सिद्धयर्थे जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

ॐ उग्र-वीरं महा-विष्णुं, ज्वलन्तं सर्वतोमुखम्। नृसिंहं भीषणं भद्रं, मृत्यु-मृत्युं नमाम्यहम्॥१
क्ष्रौं वीजं में शिरः पातु, चन्द्र-वर्णो महा-मनुः। कण्ठं पातु ध्रुवं क्ष्रौं हृद, भगवते चक्षुषी मे।
नरसिंहाय च ज्वाला-मालिने पातु कर्णकम्॥२
दीप्त-दंष्ट्राय च तथाऽग्नि-नेत्राय च नासिकां। सर्व-रक्षोघ्नाय तथा, सर्व-भूत-हिताय च॥३
सर्व-ज्वर-विनाशाय, दह-दह पद-द्वयम्। रक्ष-रक्ष वर्म-मन्त्रः, स्वाहा पातु मुखं मम॥४
ॐ रामचन्द्राय नमः, पातु च हृदयं मम। क्लीं पायात् पार्श्व-युग्मं च, तारो नमः पदं ततः॥५
नारायणाय नाभिं च, आं ह्रीं क्रों क्ष्रौं चैव हुं फट्। षडक्षरः कटिं पातु, ॐ नमो भगवतेऽयम्॥६
वासुदेवाय च पृष्ठं, क्लीं कृष्णाय ऊरु-द्वयं। क्लीं कृष्णाय सदा पातु, जानुनी च मनूत्तमः॥७
क्लींग्लौंक्लीं श्यामलाङ्गाय, नमः पायात् पद-द्वयं। क्ष्रौं नृसिंहाय क्ष्रौं चैव, सर्वाङ्गे मे सदाऽवतु॥८

॥ फल-श्रुति ॥

इति ते कथितं वत्स! सर्व-मन्त्रौघ-विग्रहं। तव स्नेहान्मया ख्यातं, प्रवक्तव्यं न कस्यचित्॥१
गुरु-पूजां विधायाथ, गृह्णीयात् कवचं ततः। सर्व-पुण्य-युतो भूत्वा, सर्व-सिद्धि-युतो भवेत्॥२
शतमष्टोत्तरं चास्य, पुरश्चर्या-विधिः स्मृता। हवनादीन् दशांशेन, कृत्वा साधक-सत्तमः॥३
ततस्तु सिद्ध-कवचः, पुण्यात्मा मदनोपमः। स्पर्द्धामूर्द्धधूय भवने, लक्ष्मीर्वाणी वसेत् ततः॥४
पुष्पाञ्जल्यष्टकं दत्त्वा, मूलेनैव पठेत् सकृत्। अपि वर्ष-सहस्राणां, पूजायां फलमाप्नुयात्॥५
भूर्जे विलिख्य गुटिकां, स्वर्णस्थां धारयेद् यदि। कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ, नरसिंहो भवेत् स्वयम्॥६
योषिद्-वाम-भुजे चैव, पुरुषो दक्षिण-करे। बिभृयात् कवचं पुण्यं, सर्व-सिद्धि-युतो भवेत्॥७
काक-वन्ध्या च या नारी, मृत-वत्सा च या भवेत्। जन्म-वन्ध्या नष्ट-पुत्रा, बहु-पुत्र-वती भवेत्॥८
कवचस्य प्रसादेन, जीवन्मुक्तो भवेन्नरः। त्रैलोक्यं क्षोभयेत् सदा, त्रैलोक्य-विजयी भवेत्॥९
भूत-प्रेत-पिशाचाश्च, राक्षसा दानवाश्च ये। तं दृष्ट्वा प्रपलायन्ते, देशाद् देशान्तरे ध्रुवम्॥१०
यस्मिन् गृहे च कवचं, ग्रामे वा यदि तिष्ठति। तद् देशं तु परित्यज्य, प्रयान्ति ह्यति-दूरतः॥११

॥ इति ब्रह्म-संहितायां त्रैलोक्य-विजयं नाम श्रीनृसिंह-कवचम्॥

उ	ज्व	नृ	मृ
ग्र	ल	सिं	त्यु
वी	न्तं	हं	मृ
रं	स	भी	त्युं
म	र्व	ष	न
हा	तो	णं	मा
वि	मु	भ	म्य
ष्णुं	खं	द्रं	हं

'**पूर्व-पीठिका**' और '**फल-श्रुति**' के अनुसार उक्त '**श्रीनृसिंह कवच**' का १०८ पाठ करने से इसका '**पुरश्चरण**' होता है। दशांश अर्थात् ११ पाठ द्वारा '**हवन**' और एक-एक पाठ द्वारा '**तर्पण**', '**मार्जन**' कर एक ब्राह्मण को भोजन कराने से यह '**कवच-स्तोत्र**' सिद्ध हो जाता है। तब इसका प्रयोग कर विविध प्रकार की कामनाओं की पूर्ति की जा सकती है। कामनाओं का उल्लेख '**पूर्व-पीठिका**' और '**फल-श्रुति**' में किया गया है। यहाँ **चित्रित** '**यन्त्र**' को **भोज-पत्र** पर लिखकर '**ताबीज**' के रूप में कण्ठ या भुजा में धारण करने से अनेक कामनाओं की पूर्ति होती है। विशेष मार्ग-दर्शन अपने गुरु-देव से प्राप्त कर लेना चाहिए।

—पं० कृष्णानन्द मिश्र वैद्य, ग्राम ककरा, प्रयाग

***

[१६]

मनोवांछित वर-प्राप्ति-प्रयोग

भगवती सीता ने **गौरी की उपासना** निम्न मन्त्र द्वारा की थी, जिसके फल-स्वरूप उनका विवाह **भगवान् श्री राम** से हुआ। अत: कुमारी कन्याओं को इसका पाठ कर मनो-वाञ्छित वर पाने का प्रयास अवश्य करना चाहिए—

ॐ श्रीदुर्गायै सर्व-विघ्न-विनाशिन्यै नमः स्वाहा।

सर्व-मङ्गल-मङ्गल्ये, सर्व-काम-प्रदे शिवे! देहि मे वाञ्छितं नित्यं, नमस्ते शङ्कर-प्रिये!॥

दुर्गे शिवेऽभये माये, नारायणि सनातनि! जपे मे मङ्गलं देहि, नमस्ते सर्व-मङ्गले॥

विधि—प्रति-दिन **माँ गौरी का स्मरण-पूजन** कर उक्त मन्त्र का **११ बार पाठ** करे।

***

[१७]

'बन्दी-मोचन-मन्त्र'-प्रयोग

विनियोग—ॐ अस्य बन्दी-मोचन-स्तोत्र-मन्त्रस्य श्रीकण्व ऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। श्रीबन्दी-देवी देवता। ह्रीँ बीजं। हूं कीलकं। मम बन्दी-मोचनार्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीकण्व-ऋषये नमः शिरसि। त्रिष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे। श्रीबन्दी-देवी-देवतायै नमः हृदि। ह्रीं बीजाय नमः गुह्ये। हूं कीलकाय नमः पादयोः। मम बन्दी-मोचनार्थे जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

मंत्र—ॐ ह्रीं हूं बन्दी-दैव्यै नमः। (१०८ बार)।

बन्दी देव्यै नमस्कृत्य, वरदाभय-शोभिनीम्। तदाज्ञां शरणं गच्छत्, शीघ्रं मोचं ददातु मे॥१
बन्दी कमल-पत्राक्षी, लौह-शृङ्खला-भञ्जिनीम्। प्रसादं कुरु मे देवि! शीघ्रं मोचं ददातु मे॥२
त्वं बन्दी त्वं महा-माया, त्वं दुर्गा त्वं सरस्वती। त्वं देवी रजनी चैव, शीघ्रं मोचं ददातु मे॥३
संसार-तारिणी बन्दी, सर्व-काम-प्रदायिनी। सर्व-लोकेश्वरी देवी, शीघ्रं मोचं ददातु मे॥४
त्वं ह्रीं त्वमीश्वरी देवि!, ब्रह्माणी ब्रह्म-वादिनी। त्वं वै कल्प-क्षयं कर्त्री, शीघ्रं मोचं ददातु मे॥५
देवी धात्री धरित्री च, धर्म-शास्त्रार्थ-भाषिणी। दुःश्वासाम्ब-रागिणी देवि! शीघ्रं मोचं ददातु मे॥६
नमोऽस्तु ते महा-लक्ष्मी, रत्न-कुण्डल-भूषिता। शिवस्यार्धाङ्गिनी चैव, शीघ्रं मोचं ददातु मे॥७
नमस्कृत्य महा-दुर्गां, भयात्तु तारिणीं शिवां। महा-दुःख-हरां चैव, शीघ्रं मोचं ददातु मे॥८

॥ फल-श्रुति ॥

इदं स्तोत्रं महा-पुण्यं, यः पठेन्नित्यमेव च। सर्व-बन्ध-विनिर्मुक्तो, मोक्षं च लभते क्षणात्॥१

हवन-विधि—कमल-गट्टा, गाय का घी, शुद्ध शहद, मिश्री, हल्दी एवं लाल चन्दन के चूर्ण को मिश्रित कर उससे 'जप'-संख्या का दशांश '**हवन**' करना चाहिए।

***

[१८]

रोग एवं अपमृत्यु-निवारक प्रयोग

१. किसी **प्राचीन शिवालय** में जाकर **गणेश जी** की पूजा **ॐ गं गणपतये नमः** मन्त्र से षोडशोपचार से करे। तदनन्तर **ॐ नमः शिवाय** मन्त्र से **महा-देव जी की पूजा** कर हाथ में जल लेकर विनियोग पढ़े—

२. विनियोग—**ॐ अस्य श्रीअमृत-मृत्युञ्जय-मन्त्रस्य श्रीकहोल ऋषिः, विराट् छन्दः, अमृत-मृत्युञ्जय सदा-शिवो देवता, अमुक गोत्रोत्पन्नस्य अमुक-शर्मणो मम समस्त-रोग-निरसन-पूर्वकं अप-मृत्यु-निवारणार्थे जपे विनियोगः।** यह पढ़कर जल छोड़ दे। फिर ऋष्यादि-न्यास कर और षडङ्ग-न्यास-पूर्वक ध्यान करे। यथा—

३. ऋष्यादि-न्यास—**श्रीकहोल-ऋषये नमः शिरसि। विराट्-छन्दसे नमः मुखे। अमृत-मृत्युञ्जय-सदाशिव-देवतायै नमः हृदि। मम समस्त-रोग-निरसन-पूर्वकं अपमृत्यु-निवारणार्थे जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।**

४. कर-न्यास—**ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। जूं तर्जनीभ्यां नमः। सः मध्यमाभ्यां नमः। मां अनामिकाभ्यां नमः। पालय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। पालय करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।**

५. षडङ्ग-न्यास—**ॐ हृदयाय नमः। जूं शिरसे स्वाहा। सः शिखायै वषट्। मां कवचाय हुम्। पालय नेत्र-त्रयाय वौषट्। पालय अस्त्राय फट्।**

६. ध्यान—**स्फुटित-नलिन-संस्थं, मौलि-बद्धेन्दु-रेखा-स्रवदमृत-रसार्द्रं चन्द्र-वन्ह्यर्क-नेत्रम्।**
स्व-कर-लसित-मुद्रा-पाश-वेदाक्ष-मालं, स्फटिक-रजत-मुक्ता-गौरमीशं नमामि॥

७. मन्त्र—**ॐ जूं सः मां पालय पालय।** जप-संख्या—सवा लाख।

८. **सवा लाख मन्त्र-जप** के लिए **५ हजार जप प्रति-दिन** करना चाहिए। **'जप'** के बाद **न्यास** आदि करके पुनः **ध्यान** करे। फिर जल लेकर—**'अनेन मत्-कृतेन जपेन श्री-अमृत-मृत्युञ्जयः प्रीयताम्'** कहकर जल छोड़ दे।

९. **'जप'** का दशांश **'हवनादिक'** करे। **'हवन'** हेतु **'तिलाज्य'** में 'गिलोय' भी डालनी चाहिए। हवनादि न कर सकने पर **'चतुर्गुणित जप'** करने से अनुष्ठान पूर्ण होता है एवं **आरोग्यता** मिलती है, **अप-मृत्यु-निवारण** होता है।

—पं० लक्ष्मणदत्त शास्त्री चतुर्वेद, मथुरा (उत्तर प्रदेश)

❋ ❋ ❋

श्रद्धाञ्जलि!

'चण्डी'-पत्रिका के पाठकों को यह जानकर दुःख होगा कि **'चण्डी'**-परिवार के परम हितैषी, **'चण्डी'**-पत्रिका के प्रचार-प्रसार में अत्यन्त तत्पर **श्रीशुक्ला न्यूज एजेन्सी, हजरतगंज चौराहा, लखनऊ (उ०प्र०)** के व्यवस्थापक **श्रीविश्वनाथ शुक्ल** अब हमारे बीच स-शरीर नहीं हैं। हम उनके प्रति यहाँ 'चण्डी'-परिवार की ओर से **हार्दिक श्रद्धाञ्जलि** अर्पित करते हैं। **श्रीजगदम्बा** आपके परिवार को शान्ति प्रदान करें, यही प्रार्थना है।

—ऋतशील शर्मा

श्रीसद्-गुरु-स्तोत्र (हिन्दी)

- गुरु ब्रह्मा हैं, गुरु विष्णु हैं, गुरु ही भगवान् शिव हैं। निश्चय ही गुरु पर-ब्रह्म हैं। उन श्रीगुरु को नमस्कार है॥१॥
- जिन्होंने इस चल और अचल समस्त विश्व को व्याप्त कर रखा है, उन परमा शक्ति का ज्ञान जिन्होंने कराया है, उन श्रीगुरु को नमस्कार है॥२॥
- अज्ञान-रूपी अँधेरे से अन्धे व्यक्ति की आँख को जिन्होंने ज्ञान-रूपी काजल की सलाई से खोल दिया है, उन श्रीगुरु को नमस्कार है॥३॥
- जिन्होंने स्थावर और जङ्गम सहित सारे चल-अचल विश्व को व्याप्त कर रखा है, उन परमा शक्ति को जिन्होंने दिखा दिया है, उन श्रीगुरु को नमस्कार है॥४॥
- चैतन्य-शक्ति के रूप से जिन्होंने चल और अचल सहित तीनों लोकों–पृथ्वी, स्वर्ग और पाताल–को व्याप्त कर रखा है, उन परमा शक्ति का ज्ञान जिन्होंने कराया है, उन श्रीगुरु को नमस्कार है॥५॥
- जिनका स्वरूप सभी श्रुतियों अर्थात् वेदों के शिरोमणि अर्थात् वेदान्त के ज्ञान से प्रकाशमान है और जो वेदान्त-रूपी कमल को विकसित करनेवाले सूर्य के समान हैं, उन श्रीगुरु को नमस्कार है॥६॥
- जो चैतन्य-स्वरूप हैं, सनातन हैं, शान्ति-मय हैं, आकाश से परे हैं, उन श्रीगुरु को नमस्कार है॥७॥
- जो ज्ञान की शक्ति से सम्पन्न हैं, जो तत्त्व-बोध की माला से शोभायमान हैं और जो भोग तथा मोक्ष के देनेवाले हैं, उन श्रीगुरु को नमस्कार है॥८॥
- जो आत्म-स्वरूप के ज्ञान-रूपी अग्नि को प्रज्वलित कर व्यक्ति के अनेक जन्मों से प्राप्त कर्म-फल-रूपी ईंधन को भस्मसात् कर देते हैं, उन श्रीगुरु को नमस्कार है॥९॥
- जिनका चरणोदक संसार-सागर को सुखा देता है और तत्त्व-ज्ञान की सम्पत्ति को समुचित रूप से प्राप्त करा देता है, उन श्रीगुरु को नमस्कार है॥१०॥
- गुरु से श्रेष्ठ न कोई तत्त्व है, न कोई तप गुरु से बढ़कर है और न ही तत्त्व-ज्ञान से श्रेष्ठ कुछ अन्य है। ऐसे महिमावाले श्रीगुरु को नमस्कार है॥११॥
- मेरे नाथ जगत् के नाथ हैं, मेरे गुरु सारे संसार के श्रीगुरु हैं, मेरी आत्मा ही सभी प्राणियों की आत्मा है। उन श्रीगुरु को नमस्कार है॥१२॥
- गुरु ही सृष्टि के आदि-भूत हैं और साथ ही वे आदि-रहित भी हैं। श्रीगुरु ही सर्व-श्रेष्ठ देवता हैं। गुरु से अधिक श्रेष्ठ कोई नहीं है। उन श्रीगुरु को नमस्कार है॥१३॥
- उन सद्-गुरु को मैं नमस्कार करता हूँ, जो ब्रह्मानन्द के साक्षात् स्वरूप हैं, जो परम सुख को प्रदान करते हैं, जो सर्वथा विरक्त हैं, जो साक्षात् ज्ञान-स्वरूप हैं, जो सभी प्रसार के द्वैत-भावों (सुख-दुःख, लाभ-हानि, जन्म-मरण आदि) से परे हैं, जो आकाश के समान असीम और निर्मल हैं, जो वेद के 'तत्त्वमसि' (अर्थात् तुम वही-ब्रह्म हो) आदि महा-वाक्यों द्वारा लक्षित अर्थात् दर्शित हैं, जो अडिग हैं, जो सभी बुद्धियों के साक्षी-भूत हैं, जो सभी भावों के परे हैं तथा जो तीनों गुणों से रहित हैं॥१४॥

***

रजि० सं० ३२९८१/५७

श्रीपीताम्बरा-पीठ

दतिया (म०प्र०)

दर्शनीय विग्रह

श्रीगणेश

भ० महा-काल भैरव

श्रीबटुक भैरव

श्रीहनुमान

पराम्बा पीताम्बरा

प्रकाशक : श्रीऋतशील शर्मा, श्रीचण्डी-धाम,
प्रयाग-६ ☎ ०५३२-२५०२७८३

श्री श्रीमहा-काली

श्री श्रीमहा-लक्ष्मी

श्री-यन्त्र

श्री श्रीमहा-सरस्वती

मुद्रक : पूर्वा ऑफसेट, प्रयाग (०५३२-२४२-२७८२९)